बाइबल पर आधारित निर्णय लेना

अध्याय 5

परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण : प्रकाशन और परिस्थिति

Manuscript

thirdmill
Biblical Education. For the World. For Free.

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2021के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी भाग को प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इनकोरपोरेशन, 316, लाइव ओक्स बुलेवार्ड, कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 की लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या अध्ययन के उद्देश्यों के लिए संक्षिप्त उद्धरणों के अतिरिक्त किसी भी रूप में या किसी भी तरह के लाभ के लिए पुनः प्रकशित नहीं किया जा सकता।

पवित्रशास्त्र के सभी उद्धरण बाइबल सोसाइटी ऑफ़ इंडिया की हिन्दी की पवित्र बाइबल से लिए गए हैं। सर्वाधिकार © The Bible Society of India

थर्ड मिलेनियम के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम एक लाभनिरपेक्ष सुसमाचारिक मसीही सेवकाई है जो पूरे संसार के लिए मुफ्त में बाइबल आधारित शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है।

संसार के लिए मुफ़्त में बाइबल आधारित शिक्षा।

हमारा लक्ष्य संसार भर के हज़ारों पासवानों और मसीही अगुवों को मुफ़्त में मसीही शिक्षा प्रदान करना है जिन्हें सेवकाई के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ है। हम इस लक्ष्य को अंग्रेजी, अरबी, मनडारिन, रूसी, और स्पैनिश भाषाओं में अद्वितीय मल्टीमीडिया सेमिनारी पाठ्यक्रम की रचना करने और उन्हें विश्व भर में वितरित करने के द्वारा पूरा कर रहे हैं। हमारे पाठयक्रम का अनुवाद सहभागी सेवकाइयों के द्वारा दर्जन भर से अधिक अन्य भाषाओं में भी किया जा रहा है। पाठ्यक्रम में ग्राफिक वीडियोस, लिखित निर्देश, और इंटरनेट संसाधन पाए जाते हैं। इसकी रचना ऐसे की गई है कि इसका प्रयोग ऑनलाइन और सामुदायिक अध्ययन दोनों संदर्भों में स्कूलों, समूहों, और व्यक्तिगत रूपों में किया जा सकता है।

वर्षों के प्रयासों से हमने अच्छी विषय-वस्तु और गुणवत्ता से परिपूर्ण पुरस्कार-प्राप्त मल्टीमीडिया अध्ययनों की रचना करने की बहुत ही किफ़ायती विधि को विकसित किया है। हमारे लेखक और संपादक धर्मवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित शिक्षक हैं, हमारे अनुवादक धर्मवैज्ञानिक रूप से दक्ष हैं और लक्ष्य-भाषाओं के मातृभाषी हैं, और हमारे अध्यायों में संसार भर के सैकड़ों सम्मानित सेमिनारी प्रोफ़ेसरों और पासवानों के गहन विचार शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमारे ग्राफिक डिजाइनर, चित्रकार, और प्रोडयूसर्स अत्याधुनिक उपकरणों और तकनीकों का प्रयोग करने के द्वारा उत्पादन के उच्चतम स्तरों का पालन करते हैं।

अपने वितरण के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए थर्ड मिलेनियम ने कलीसियाओं, सेमिनारियों, बाइबल स्कूलों, मिशनरियों, मसीही प्रसारकों, सेटलाइट टेलीविजन प्रदाताओं, और अन्य संगठनों के साथ रणनीतिक सहभागिताएँ स्थापित की हैं। इन संबंधों के फलस्वरूप स्थानीय अगुवों, पासवानों, और सेमिनारी विद्यार्थियों तक अनेक विडियो अध्ययनों को पहुँचाया जा चुका है। हमारी वेबसाइट्स भी वितरण के माध्यम के रूप में कार्य करती हैं और हमारे अध्यायों के लिए अतिरिक्त सामग्रियों को भी प्रदान करती हैं, जिसमें ऐसे निर्देश भी शामिल हैं कि अपने शिक्षण समुदाय को कैसे आरंभ किया जाए।

थर्ड मिलेनियम a 501(c)(3) कारपोरेशन के रूप में IRS के द्वारा मान्यता प्राप्त है। हम आर्थिक रूप से कलीसियाओं, संस्थानों, व्यापारों और लोगों के उदार, टैक्स-डीडक्टीबल योगदानों पर आधारित हैं। हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए, और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार इसमें सहभागी हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org को देखें।

विषय-वस्तु

परिचय 1
प्रकाशन की विषयवस्तु 2
वास्तविकताएं 2
लक्ष्य 3
माध्यम 5
प्रकाशन की प्रकृति 6
प्रेरणा 7
उदाहरण 9
प्रकाशन के प्रति नीतियां 11
शिथिलता 11
वर्णन 11
परिणाम 12
सुधार 14
कड़ाई 15
वर्णन 15
परिणाम 16
सुधार 17
मानवीय अधिकार 18
वर्णन 18
परिणाम 19
सुधार 20
प्रकाशन का प्रयोग 21
वास्तविकताएं 22
लक्ष्य 24
माध्यम 26
निष्कर्ष 27

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

बाइबल पर आधारित निर्णय लेना

अध्याय पाँच

परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण: प्रकाशन और परिस्थिति

परिचय

प्रत्येक माता-पिता जानते हैं कि बच्चे प्रायः सरल से सरल निर्देशों को भी गलत रूप में समझते हैं। यह चाहे, "कृपया भोजन बनाने में मेरी सहायता कर दो," हो या "अपना कमरा साफ कर लो"। परन्तु निर्देश चाहे जो भी हों, परन्तु बच्चे हमेशा उससे उलटा ही समझते हैं जो माता-पिता कहते हैं। कभी-कभी बच्चे जानबूझ कर ऐसा करते हैं, परन्तु वे उसे सचमुच समझ नहीं पाते।

सही कार्य को पहचानना कभी-कभी मुश्किल भी हो सकता है। और इसके पीछे एक अच्छा कारण भी है। चाहे हम महसूस करें या न करें, सरल निर्देशों को मानने में भी निर्देशों के अतिरिक्त कई बातों की जानकारी की आवश्यकता होती है। छोटे बच्चों के संदर्भ में यह देखना सरल होता है क्योंकि उनमें जरूरी ज्ञान का अभाव होता है।

परन्तु व्यस्क होने के नाते हमें अनेक विषयों के बारे में हमारे ज्ञान पर निर्भर होना होता है जब हम निर्देशों का पालन करते हैं। और यह तब और भी अधिक लागू होता है जब यह इस संदर्भ में आता है कि परमेश्वर हमसे क्या चाहता है। किस परिस्थिति में हमें क्या करना चाहिए, यह जानने के लिए हमें प्रभु के विशेष निर्देशों को ही जानना जरूरी नहीं है बल्कि अन्य कई बातों को समझना भी जरूरी है।

यह हमारी श्रृंखला बाइबल पर आधारित निर्णय लेना का पांचवा अध्याय है, और हमने इसका शीर्षक दिया है, "परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण: प्रकाशन और परिस्थिति"। इस अध्याय में हम अपने ध्यान को नैतिक शिक्षा पर परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण पर लगाएंगे, और इस बात पर केन्द्रित करेंगे कि परिस्थितियों का एक सही ज्ञान किस प्रकार परमेश्वर के प्रकाशन को समझने में हमारी सहायता कर सकता है।

इन सारे अध्यायों में हमने बल दिया है कि नैतिक निर्णय लेना एक व्यक्ति के द्वारा एक परिस्थिति पर परमेश्वर के वचन को लागू करना होता है। यह सारांश इस बात को दर्शाता है कि हर नैतिक प्रश्न के प्रति तीन मूलभूत पहलू होते हैं। और इस अध्याय में हम हमारी नैतिक परिस्थिति और परमेश्वर के वचन में प्रकट मानकों के बीच के संबंध को देखते हुए इनमें से दो पहलुओं पर ध्यान देंगे।

इस श्रृंखला के सारे अध्यायों में हमने नैतिक शिक्षा के तीन दृष्टिकोणों के संबंध में परमेश्वर के वचन, परिस्थितियों और व्यक्तियों के बीच संबंध का विवरण भी दिया है। पहला, निर्देशात्मक दृष्टिकोण, जो परमेश्वर के वचन के दृष्टिकोण से नैतिक शिक्षा को देखता है। यह दृष्टिकोण उन नियमों, या मानकों पर बल देता है जो परमेश्वर हम पर प्रकट करता है।

दूसरा, परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण परिस्थिति पर बल देने के साथ नैतिक शिक्षा को देखता है, और यह ध्यान देता है कि हमारी परिस्थितियों के विवरण किस प्रकार हमारे नैतिक निर्णयों से संबंध रखते हैं, और किस प्रकार हम परमेश्वर को महिमा देने के लिए इन परिस्थितियों के साथ कार्य कर सकते हैं।

तीसरा, एक अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण भी है जो नैतिक शिक्षा को उन व्यक्तियों के दृष्टिकोण से देखता है जो नैतिक निर्णयों को लेता है। यह दृष्टिकोण उनकी भूमिका और विशेषताओं और उन तरीकों पर बल देता है जिनमें उन्हें परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए बदलना है।

ये तीनों दृष्टिकोण सच्चे, महत्वपूर्ण एवं संतुलित हैं। इसलिए कार्य करने का बुद्धिमान तरीका तीनों दृष्टिकोणों को एक साथ प्रयोग करना है, और प्रत्येक को हमारे ज्ञान को बढ़ाने की अनुमति देना है।

इस अध्याय में हम परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण के माध्यम से नैतिक शिक्षा को देखेंगे और यह देखेंगे कि हमारी परिस्थिति की विभिन्न विशेषताओं को हमारे निर्णयों में सहायता करनी चाहिए।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

हमारा अध्याय चार मुख्य भागों में विभाजित होगा: पहला, हम प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी विषय पर ध्यान देंगे, और देखेंगे कि नैतिक परिस्थितियों के विषय में प्रकाशन हमें क्या सिखाता है। दूसरा, हम प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति के बारे में बात करेंगे। यहां हम विशेष रूप से यह ध्यान देंगे कि परमेश्वर के प्रकाशन को इसकी अपनी परिस्थितियों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। तीसरा, हम प्रकाशन के प्रति कुछ लोकप्रिय व्याख्यात्मक नीतियों की चर्चा करेंगे, जिसमें हम उन कुछ तरीकों को देखेंगे जिनमें मसीहियों ने प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी चरित्र को देखा है। और चौथा, हम वर्तमान परिस्थितियों में प्रकाशन को लागू करने की ओर मुड़ेंगे। आइए, हमारी परिस्थिति के विषय में जानकारी के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में प्रकाशन के विषय के साथ आरंभ करें।

प्रकाशन की विषयवस्तु

यदि आपको पहले के अध्यायों से याद होगा तो तीन प्रकार के आधारभूत प्रकाशन होते हैं: विशेष प्रकाशन, जैसे कि बाइबल; सामान्य प्रकाशन, जो कि हमें सृष्टि के माध्यम से सामान्यतः मिलते हैं; और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन, जो व्यक्तियों के माध्यम से हमारे सामने आते हैं। हमें सदैव यह याद रखना चाहिए कि परमेश्वर इन तीनों तरीकों से अपनी इच्छा हम पर प्रकट करता है।

अब यद्यपि विशेष, सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन कुछ रूपों में भिन्न-भिन्न है, परन्तु वे सब वास्तविकताओं के रूप में बातों को दर्शाते हैं। ये वास्तविकताएं उन सब बातों को सम्मिलित करती हैं जो परमेश्वर हमारी परिस्थिति के बारे में प्रकट करता है, जैसे कि घटनाओं, लोगों, वस्तुओं, विचारों, कर्तव्यों, कार्यों- और यहां तक कि परमेश्वर और उसका प्रकाशन।

इस वास्तविकता के बारे में बात करना संभव है कि परमेश्वर का प्रकाशन अनेक रूपों में बातचीत करता है। सामान्य रूप में वास्तविकताओं के बारे में बात करने के अतिरिक्त हम लक्ष्यों और माध्यमों के बारे में बात करेंगे। लक्ष्य विचारों, शब्दों और कार्यों के प्रस्तावित परिणाम हैं। वे ऐसे परिणाम होते हैं जिनके लिए हम काम करते हैं या जिनके लिए हमें काम करना चाहिए। और माध्यम वे तरीके हैं जिनके द्वारा हम लक्ष्यों तक पहुंचते हैं। वे उन सबको शामिल करते हैं जिनके बारे में हम सोचते हैं या जो हम करते हैं, और उस माध्यम या तरीके को भी जिनका प्रयोग हम हमारे लक्ष्यों को पूरा करने के लिए करते हैं।

हम उन सब परिस्थिति-संबंधी तत्वों को, जिनका हमने उल्लेख किया है, संक्षिप्त रूप में देखने के द्वारा प्रकाशन की विषय-वस्तु को ध्यान से देखेंगे। पहला, हम प्रकाशन को उन वास्तविकताओं के आधार पर देखेंगे जो यह हमारे सामने प्रस्तुत करता है। दूसरा, हम उन लक्ष्यों को देखेंगे जो प्रकाशन हमें प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है। और तीसरा, जब हम इन लक्ष्यों को पाने के प्रयास करते हैं तो उन माध्यमों को खोजने का प्रयास करेंगे जिनके प्रयोग के बारे में प्रकाशन हमें सिखाता है। आइए उन सामान्य वास्तविकताओं के साथ आरंभ करें जो प्रकाशन हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है।

वास्तविकताएं

अब स्पष्ट कारणों से हर उस वास्तविकता को दर्शाना तो असम्भव होगा जो विशेष, सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन हमारे समक्ष प्रस्तुत करते हैं। अतः हमारे नैतिक मूल्यांकनों में वास्तविकताओं की भूमिका को दर्शाने के लिए हम उस सबसे आधारभूत वास्तविकता के रूप में स्वयं परमेश्वर पर ध्यान देंगे जिसे हम प्रकाशन के द्वारा सीखते हैं।

जब हमने पिछले अध्यायों में निर्देशात्मक दृष्टिकोण का अध्ययन किया था, तो हमने देखा था कि परमेश्वर का चरित्र हमारा परम मानक या स्तर है। इसी प्रकार, परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण से परमेश्वर हमारी परम वास्तविकता है, हमारा परम नैतिक परिपेक्ष्य। परमेश्वर के अस्तित्व की वास्तविकता हमारे प्रत्येक नैतिक प्रश्न पर अधिकार रखती है और उसके चरित्र के स्तर के द्वारा जीने के लिए हमें प्रेरित करती है।

निसंदेह, परमेश्वर के समक्ष हमारी जिम्मेदारियों को हमें बताने के लिए उसे पहले स्वयं को हमारे समक्ष प्रकट करना जरूरी है। और यही वह समय है जहां प्रकाशन आता है। प्रकाशन के माध्यम से परमेश्वर अपने बारे में वास्तविकताओं को बताता है और वह हमसे क्या चाहता है इसके बारे में भी वास्तविकताओं को बताता है। प्रकाशन के बिना भी परमेश्वर की आज्ञा मानने की जिम्मेदारी हम पर होगी परन्तु हमें यह पता नहीं होगा कि कैसे।

उन परिस्थितियों के आधार पर सोचें जिनका आप एक देश के नागरिक होने के रूप में सामना करते हैं। सरकार उस देश पर अधिकार रखती है, और उसके नियम या कानून वे माध्यम होते हैं जिनके द्वारा सरकार अपने लोगों पर नियंत्रण रखती है। सरकार अन्य तरीकों से भी नियंत्रण करती है। उसके कर्मचारी होते हैं जो उसके आदेश की पालना करवाते हैं। उसके पास नक्शे होते हैं जो इसकी सीमाओं को परिभाषित करते हैं। अर्थव्यवस्था आदि को संचालित करने के लिए उसके पास मुद्रा होती है। ये सब वे माध्यम हैं जिनके द्वारा सरकार अपने अधिकार को रखती है और अपने अधिकार की बातों को संचालित करती है।

दूसरे रूप में कहें तो संरकार का अस्तित्व हमारी कानूनी परिस्थिति में एक वास्तविकता है और उसके नियम या कानून वे अतिरिक्त वास्तविकताएं हैं जो उन कर्त्तव्यों को स्पष्ट करती हैं जो हमारे सरकार के प्रति होते हैं। और यदि हम सरकार के प्रति आज्ञाकारी बनना चाहते हैं तो ये वे वास्तविकताएं हैं जिन्हें हमें जानना जरूरी है।

इसी प्रकार, परमेश्वर सारी सृष्टि पर सबसे बड़ा अधिकारी है। उसका अधिकार सबसे श्रेष्ठ है और उसका चरित्र उसकी इच्छा की सिद्ध अभिव्यक्ति है। अतः, जब वह अपना चरित्र प्रकट करता है तो प्रकाशन वह माध्यम है जिसके द्वारा परमेश्वर उसी प्रकार अपने नियंत्रण को स्थापित करता है जैसे कि मानवीय सरकारें अपने नियमों या कानूनों के द्वारा करती हैं। और जिस प्रकार मनुष्य सरकार के कानूनों का पालन करते हैं क्योंकि वे सरकार के अधिकार के तहत आते हैं, उसी प्रकार सारी सृष्टि को उसके अधिकार के अधीन आते हुए परमेश्वर के नियमों का पालन करना चाहिए।

हमारे समक्ष वास्तविकताओं को दर्शाने के अतिरिक्त परमेश्वर का प्रकाशन वास्तविकताओं के एक विशेष प्रकार के बारे में भी सिखाता है जो नैतिक शिक्षा के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है: मसीही व्यवहार और निर्णय लेने के लिए उचित लक्ष्य।

लक्ष्य

जब हम नैतिक शिक्षा में लक्ष्यों के बारे में बात करते हैं, तो हमारे मन में हमारे प्रयासों के अपेक्षित परिणाम होते हैं। कई रूपों में, यह उस तरीके से भिन्न नहीं है जिसमें हम हमारे जीवन के किसी अन्य कार्य को पूरा करने के लिए लक्ष्यों को स्थापित करते हैं। मैं शायद रोजाना एक निश्चित समय पर उठने के लिए या मेरी पत्नी के जन्मदिन पर उसके लिए उपहार खरीदने का लक्ष्य रख सकता हूँ। ये वे कार्य होते हैं जिन्हें हम तत्काल पूरा करना चाहते हैं, या फिर वे कार्य भी जिन्हें हम कभी भविष्य में पूरा करना चाहते हैं। परन्तु कैसा भी विषय हो, हमारे लक्ष्य हमारे कार्यों को दिशा प्रदान करते हैं।

अब अधिकांश विषयों में हमारे लक्ष्य काफी जटिल होते हैं। उदाहरण के तौर पर, एक बढ़ई के बारे में सोचें जो एक मकान को बनाने के उद्देश्य से लकड़ी को नापकर काटता है। जब वह ऐसा करता है तो उसके सबसे तात्कालिक लक्ष्य होते हैं बिल्कुल सटीक रूप में नापना और काटना। दूरगामी लक्ष्य

होता है मकान को बनाना। वह शायद अपने परिवार की जीविका के लिए भी कार्य कर रहा हो। और यदि उसके कार्य वास्तव में अच्छे होने हैं तो उसका परम लक्ष्य यह कार्य करने के द्वारा परमेश्वर की महिमा होना चाहिए।

और जैसे विशेष, सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन हमें महत्वपूर्ण वास्तविकताएं सिखाते हैं, वैसे ही प्रत्येक प्रकार का प्रकाशन हमें वह लक्ष्य प्रदान करता है जिन्हें हमें मसीही नैतिक शिक्षा में प्राप्त करना जरूरी है।

पहला, विशेष प्रकाशन हमें अनेक लक्ष्य प्रदान करता है जिन पर मसीही नैतिक शिक्षा में विचार किया जाना जरूरी है। उनमें से कुछ ये हैं- पवित्रशास्त्र हमें हमारे पड़ोसियों के साथ भलाई करने, मसीह में बच्चों को बढ़ाने और कलीसिया की एकता के लिए प्रयास करने के लक्ष्यों को सिखाता हैं। परन्तु उन अनेक लक्ष्यों मेंसे एक लक्ष्य जो विशेष प्रकाशन हमें सिखाता है, वह यह है कि यह परमेश्वर को महिमा देने के लक्ष्य को उच्चतम और सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करता है।

उदाहरण के तौर पर 1 कुरिन्थियों 10:31 में पौलुस ने यह निर्देश दिया:

> **सो तुम चाहे खाओ, चाहे पीओ, चाहे जो कुछ करो, सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिये करो। (1 कुरिन्थियों 10:31)**

खाने और पीने की चीजों को चुनने जैसे जीवन के छोटे विषयों में भी हमारा परम लक्ष्य परमेश्वर को महिमा देना होना चाहिए।

सामान्य प्रकाशन भी कई लक्ष्यों को पहचानता है जिनमें से कुछ अच्छे होते हैं और कुछ बुरे। और विशेष प्रकाशन के समान यह भी हमें सिखाता है कि हमारा सबसे बड़ा लक्ष्य परमेश्वर को महिमा देना और उसे धन्यवाद देना है। रोमियों 1:20-21 में पौलुस के शब्दों को सुनें:

> **क्योंकि उसके अनदेखे गुण, अर्थात् उस की सनातन सामर्थ, और परमेश्वरत्व जगत की सृष्टि के समय से उसके कामों के द्वारा देखने में आते है, यहां तक कि वे निरूत्तर हैं। इस कारण कि परमेश्वर को जानने पर भी उन्हों ने परमेश्वर के योग्य बड़ाई और धन्यवाद न किया, परन्तु व्यर्थ विचार करने लगे, यहां तक कि उन का निर्बुद्धि मन अन्धेरा हो गया। (रोमियों 1:20-21)**

सृष्टि में परमेश्वर की महिमा दर्शाती है कि हमें परमेश्वर के प्रति वफादार होना चाहिए और कि हमें उसकी स्तुति करनी चाहिए- जो कुछ भी हम करते हैं उस सब में हमें उसे महिमा देनी चाहिए। सारांश में, यह हमारे सबसे श्रेष्ठ लक्ष्य के रूप में परमेश्वर की महिमा को रखना सिखाती है।

अंत में, अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन भी बुरे लक्ष्यों को छोड़ने और अच्छे लक्ष्यों को पहचानने में हमारी सहायता करता है, विशेषकर हमारे विवेक के द्वारा। और विश्वासियों के विषय में पवित्र आत्मा अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन का एक अन्य स्रोत है जो हमारे भीतर कार्य करता है ताकि हम अच्छे लक्ष्यों का अनुसरण करें और बुरे लक्ष्यों को त्याग दें। जैसा कि पौलुस ने फिलिप्पियों 2:13 में लिखा:

> **क्योंकि परमेश्वर ही है, जिस ने अपनी सुइच्छा निमित्त तुम्हारे मन में इच्छा और काम, दोनों बातों के करने का प्रभाव डाला है। (फिलिप्पियों 2:13)**

हम यहां पर देखते हैं कि परमेश्वर पवित्र आत्मा की आंतरिक सेवकाई के द्वारा हमारे भीतर अस्तित्व-संबंधी रूप में कार्य करता है और अपने उद्देश्य और लक्ष्य के अनुसार काम करवाने की सामर्थ और प्रेरणा देता है।

अतः हम देखते हैं कि परमेश्वर तीनों प्रकार के प्रकाशन- विशेष, सामान्य और अस्तित्व-संबंधी- का प्रयोग करता है ताकि वह हमें उन लक्ष्यों को सिखाए जिन्हें परमेश्वर प्रमाणित करता है।

वास्तविकताओं और लक्ष्यों के आधार पर प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी विषय को देखने के बाद अब हम उस माध्यम को देखने के लिए तैयार हैं जिसे परमेश्वर ने हमारी नैतिक परिस्थितियों में इस्तेमाल करने हेतु हमारे लिए प्रकट किया है।

माध्यम

सोलहवीं सदी के आरंभ में फ्लोरेन्टाइन राजनैतिक दार्शनिक निकोलो मकइवली ने एक पुस्तक लिखी जिसका शीर्षक था द प्रिंस (एक राजकुमार)। कई भाषाओं में मकइवली का नाम इस नारे का पर्यायवाची है, "परिणाम माध्यम को सही ठहरा देता है"। उसकी पुस्तके यह सिखाने के कारण कुछ बदनाम हो गईं कि कई विषयों में राजनेताओं को ऐसे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए नैतिक सिद्धांतों का उल्लंघन कर देना चाहिए जिनसे राज्य को लाभ मिलता हो।

परन्तु परमेश्वर का प्रकाशन हमारे समक्ष बहुत ही भिन्न विचार प्रस्तुत करता है। बाइबलीय रूप में किसी भी नैतिक प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें परमेश्वर द्वारा प्रकट की गई वास्तविकताओं और लक्ष्यों को ही नहीं जानना है, बल्कि हमें उन उचित माध्यमों को ढूंढ़ना भी जरूरी है जो परमेश्वर ने प्रकट किए हैं। आखिरकार, वास्तविकताओं को जांचना और लक्ष्यों को स्थापित करना वे बातें हैं जो हमारे कार्यों को प्रभावित करती हैं। परन्तु हमारे कार्य ही वे माध्यम हैं जिन्हें हमने हमारे लक्ष्यों को पूरा करने के लिए चुना है। और जैसे कि सारे मसीही जानते हैं, बाइबल इस विषय में बहुत कुछ कहती है कि हमें कैसे कार्य करना है। अतः परमेश्वर ने हमारे द्वारा चुने गए माध्यमों के बारे में जो कुछ कहा है वह हमारे निर्णय लेने की प्रक्रिया में एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटक है। याकूब 2:15-16 में याकूब की शिक्षा पर ध्यान दें:

> **यदि कोई भाई या बहिन नंगें उघाड़े हों, और उन्हें प्रतिदिन भोजन की घटी हो। और तुम में से कोई उन से कहे, कुशल से जाओ, तुम गरम रहो और तृप्त रहो; पर जो वस्तुएं देह के लिये आवश्यक हैं वह उन्हें न दे, तो क्या लाभ? (याकूब 2:15-16)**

इस वास्तविकता को पहचानना जरूरी है कि ऐसे गरीब लोग हैं जिन्हें भोजन और वस्त्रों की जरूरत है। और ऐसे लक्ष्य को रखना भी जरूरी है कि उन्हें भोजन और वस्त्र मिलें। परन्तु इस लक्ष्य पर पहुंचने के माध्यम महत्वपूर्ण हैं: हमें उन्हें वास्तव में भोजन और वस्त्र देने हैं।

इस विषय में याकूब ने ऐसे प्रश्न पूछने के द्वारा अपने पाठकों को मुख्य रूप से सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन से विचारों को प्राप्त करने के लिए उत्साहित किया, गरीबों की सहायता करने के लिए मेरे पास क्या माध्यम उपलब्ध हैं? परन्तु हमें सदैव यह याद रखना है कि विशेष प्रकाशन में परमेश्वर पर आधारित लक्ष्यों को पूरा करने के विषय में हमें सिखाने के लिए बहुत कुछ है।

एक मुख्य तरीका जिसमें पवित्रशास्त्र हमें नैतिक माध्यमों के बारे में सिखाता है वह है उदाहरणों को देने के द्वारा। एक ओर तो हम ऐसे कई लोगों के नकारात्मक उदाहरणों को पाते हैं जिन्होंने प्रशंसनीय रूप में कार्य नहीं किया। परन्तु दूसरी ओर हम ऐसे कई लोगों के सकारात्मक उदाहरणों को भी पाते हैं जिन्होंने परमेश्वर के मानको को उचित रूप से समझ लिया, उनकी परिस्थितियों का सही आकलन किया और फिर अच्छे परिणामों को प्राप्त करने के लिए अच्छे कार्यों को किया।

एक ओर पौलुस ने 1 कुरिन्थियों 10:8-11 में नकारात्मक उदाहरणों की ओर ध्यान आकर्षित किया जहां उसने ये शब्द लिखे:

> **और न हम व्यभिचार करें; जैसा उन में से कितनों ने कियाः एक दिन में तेईस हजार मर गये। और न हम प्रभु को परखें; जैसा उन में से कितनों ने किया, और सांपों के द्वारा नाश किए गए। और न तुम कुड़कुड़ाओ, जिस रीति से उन में से**

> **कितने कुड़कुड़ाए, और नाश करनेवाले के द्वारा नाश किए गए। परन्तु ये सब बातें, जो उन पर पड़ीं, दृष्टान्त की रीति पर थीः और वे हमारी चेतावनी के लिये... लिखी गईं हैं। (1 कुरिन्थियों 10:8-11)**

पौलुस ने ये नकारात्मक उदाहरण प्राचीन इस्राएलियों के 40 वर्षों तक मरूभूमि में घूमते रहने के अनुभवों से लिए। परमेश्वर ने कई सामान्य वास्तविकताओं को इस्राएलियों के समक्ष स्पष्ट कर दिया था। उसने उनकी यात्रा के लक्ष्यों को भी प्रकट कर दिया था। परन्तु जैसे-जैसे वे यात्रा में बढ़ते गए, इस्राएलियों ने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए परमेश्वर द्वारा बताए गए माध्यमों से हटने के द्वारा बड़े-बड़े पाप किए, जैसे कि भक्तिपूर्ण जीवन, आराधना और प्रार्थना में पवित्रता। इसकी अपेक्षा, इस्राएलियों ने लैंगिक अनैतिकता, मूर्तिपूजा, और कुड़कुड़ाने जैसे माध्यमों को चुना। और इसलिए, वे नकारात्मक उदाहरण के रूप में कार्य करते हैं और हमें कुछ ऐसे माध्यमों को दर्शाते हैं जिन्हें परमेश्वर प्रमाणित नहीं करता और उन पर बड़े-बड़े श्राप देता है।

दूसरी ओर, पौलुस ने सकारात्मक उदाहरणों की ओर भी ध्यान खींचा, जैसे कि 1 कुरिन्थियों 11:1 जहां उसने यह निर्देश दिया:

> **तुम मेरी सी चाल चलो जैसा मैं मसीह की सी चाल चलता हूँ। (1 कुरिन्थियों 11:1)**

यहां पौलुस ने स्वयं को और यीशु को नैतिक व्यवहार के दो सकारात्मक उदाहरणों के रूप में प्रस्तुत किया। इस विषय में पौलुस विशाल रूप में उस सारी जानकारी के बारे में बात कर रहा था जो कुरिन्थियों ने यीशु और उसके विषय में प्राप्त की थी, चाहे वह विशेष, सामान्य या अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन से आई हो। और उसने दर्शाया कि यीशु के सिद्ध जीवन को याद करने और उसके अपने असिद्ध परन्तु उदाहरणस्वरूप व्यवहार के द्वारा कुरिन्थ के लोग न केवल वास्तविकताओं और लक्ष्यों को बल्कि भक्तिपूर्ण माध्यमों को भी सीखेंगे।

सारांश में, हम देखते हैं कि प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी विषय-वस्तु में वे वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम पाए जाते हैं जो सही नैतिक निर्णयों को लेने के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। अतः यदि हमें हमारे प्रतिदिन के जीवन में बाइबल पर आधारित निर्णय लेने हैं तो हमें यह समझना होगा कि हमारी परिस्थिति के इन पहलुओं के बारे में परमेश्वर ने क्या प्रकट किया है।

अब जब हमने देख लिया है कि हमारे कर्त्तव्य को जानने के लिए यह समझ जरूरी है कि हमारी परिस्थिति के बारे में प्रकाशन की विषय-वस्तु क्या कहती है, तो हमें हमारे दूसरे विषय की ओर मुड़ना चाहिए: प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति। परमेश्वर का प्रकाशन अपनी ही परिस्थितियों में गड़ा हुआ आता है। और इस कारणवश हमें ऐसे प्रश्नों पर ध्यान देना जरूरी है, ऐसी कौनसी परिस्थितियां हैं जिनके लिए या जिनमें परमेश्वर ने स्वयं को प्रकट किया है? और किस प्रकार इन परिस्थितियों को समझना नैतिक निर्णयों में हमारी सहायता करता है?

प्रकाशन की प्रकृति

इस बात को पहचानना कि परमेश्वर का प्रकाशन वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों के बारे में क्या कहता है, यह हमारे कर्त्तव्य को जानने का महत्वपूर्ण भाग है। परन्तु यह भी महत्वपूर्ण है कि प्रकाशन अपनी ही परिस्थिति के द्वारा कैसे प्रभावित होता है। यदि हम यह समझने में असफल हो जाते हैं कि किस

प्रकार परिस्थितियां परमेश्वर द्वारा स्वयं को प्रकट करने के तरीके को प्रभावित करती हैं तो हम उसके द्वारा प्रकट बातों को गलत समझने के जोखिम में पड़ जाते हैं।

जैसा कि हमने दूसरे अध्यायों में देखा है, सृष्टि के आरंभ से ही सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशनों के साथ सदैव विशेष प्रकाशन रहा है। हमारे समय में पवित्रशास्त्र का विशेष प्रकाशन हमें पथ-प्रदर्शक के रूप में, और एक चश्में के रूप में दिया गया जिसके द्वारा हमें सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन की व्याख्या करनी है। इसका अर्थ है कि पवित्रशास्त्र में उन सब बातों पर एक व्यावहारिक प्रमुखता पाई जाती है जिनके बारे में हम सोचते हैं कि हम सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन में पा चुके हैं।

सामान्य प्रकाशन पवित्रशास्त्र की पुष्टि करता है परन्तु यह कभी भी किन्हीं नैतिक मानकों को प्रकट नहीं कर सकता जो पवित्रशास्त्र में प्रकट नहीं होते। अतः कोई भी योगदान जो सामान्य प्रकाशन हमारे कर्त्तव्य के प्रति हमारे ज्ञान में करता है वह उसी की स्पष्टता है जो पवित्रशास्त्र हमें पहले से दे देता है।

और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन के विषय में भी यही बात सही है। अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन पवित्रशास्त्र की शिक्षा की पुष्टि करता है और कभी किसी नैतिक मानक को नहीं सिखाता जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पवित्रशास्त्र में भी नहीं सिखाया गया हो।

परमेश्वर के सारे प्रकाशन महत्वपूर्ण, मूल्यवान और सच्चे हैं। परन्तु क्योंकि पवित्रशास्त्र परमेश्वर के सारे वचन को समझने की एक कुंजी है, इसलिए प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति की हमारी चर्चा विशेष रूप से बाइबल पर केन्द्रित होगी। फिर भी, हमें यह ध्यान रखना होगा कि बाइबल के बारे में हम अधिकांशतः जो कहते हैं वह परमेश्वर के शेष प्रकाशन के बारे में भी सत्य है।

हम प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति के बारे में हमारे विचार-विमर्श को दो भागों में विभाजित करेंगे: पहला, हम पवित्रशास्त्र की प्रेरणा के बारे में बात करेंगे, जिसमें हम पवित्रशास्त्र के लेखन में वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों पर ध्यान देंगे। दूसरा, हम उस उदाहरण को देखेंगे जो उन वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों को समझने के महत्व की पुष्टि करता है जो पवित्रशास्त्र की प्रेरणा में शामिल होते हैं। आइए, पहले हम पवित्रशास्त्र की प्रेरणा से आरंभ करें- अर्थात् वह भाव जिसमें परमेश्वर ने मानवीय लेखकों को पवित्रशास्त्र की रचना करने के लिए प्रेरित किया।

प्रेरणा

पवित्रशास्त्र परमेश्वर से प्रेरणा पाया हुआ मानवीय लेखन है। पवित्र आत्मा ने मानवीय लेखकों के लेखनों को यह निश्चित करने के लिए प्रेरित और संचालित किया कि जो कुछ भी वे लिखें वह सत्य हो। आत्मा ने यह इस प्रकार से किया कि जिससे मानवीय लेखक कोई गलती न करें, परन्तु इसके साथ-साथ उनके व्यक्तित्व और लेखन के उनके अभिप्राय भी सुरक्षित रहें। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप पवित्रशास्त्र का मूल अर्थ वह अर्थ है जो दैवीय और मानवीय लेखक दोनों मिलकर दर्शाना चाहते थे। यह कोई मिश्रित अर्थ नहीं है, जैसे कि मानवीय लेखक किसी एक अर्थ को चाहता था और पवित्र आत्मा किसी दूसरे अर्थ को। बल्कि यह एक एकीकृत अर्थ है जिसमें पवित्र आत्मा और मानवीय लेखक का अभिप्राय एक जैसा था।

दुर्भाग्यवश, अनेक अच्छे मसीही ऐसे कार्य करते हैं मानो कि परमेश्वर ने हमें ऐतिहासिक परिस्थितियों में पवित्रशास्त्र प्रदान नहीं किया है। वे बाइबल को समयरहित रूप में देखते हैं, मानो कि यह मानवीय भागीदारी के बिना लिखी गई हो। परन्तु जब हम यह देखते हैं कि बाइबलीय लेखकों ने अपनी स्वयं की पुस्तकों के बारे में क्या कहा तो हम पाते हैं कि ऐसा नहीं है। पवित्रशास्त्र ऐतिहासिक परिस्थितियों में दिया गया था।

प्रेरणा की इस धर्मशिक्षा को बाइबल में कई स्थानों पर रखा गया है, परन्तु हम स्वयं को ऐसे दो लेखों तक ही सीमित रखेंगे जो पवित्रशास्त्र की विषयवस्तु में पवित्र आत्मा और मानवीय लेखकों के योगदानों को दर्शाते हैं। पहला, आइए पवित्रशास्त्र के लेखक के रूप में पवित्र आत्मा की भूमिका पर ध्यान दें। सुनिए 2 पतरस 1:20-21 में पतरस ने किस प्रकार प्रेरणा की प्रकृति को स्पष्ट किया।

> **पवित्रशास्त्र की कोई भी भविष्यवाणी किसी की अपनी ही विचारधारा के आधार पर पूर्ण नहीं होती। क्योंकि कोई भी भविष्यवाणी मनुष्य की इच्छा से कभी नहीं हुई पर भक्तजन पवित्र आत्मा के द्वारा उभारे जाकर परमेश्वर की ओर से बोलते थे। (2 पतरस 1:20-21)**

जैसा कि पतरस ने यहां उल्लेख किया, बाइबल केवल एक मानवीय लेखन नहीं है। यह उन मनुष्यों द्वारा लिखी गई पुस्तक है जो पवित्र आत्मा की प्रेरणा से चलाए गए। पतरस हमें आश्वस्त करता है कि पवित्र आत्मा में हम जो भी पाते हैं उसमें परमेश्वर का अधिकार पाया जाता है और यह पूर्णतः विश्वासयोग्य है।

अब कई बार मसीही शिक्षकों ने इसे और अन्य बाइबलीय लेखों को गलत समझा है और निष्कर्ष निकाला है कि पवित्र आत्मा ही पवित्रशास्त्र का एकमात्र सच्चा लेखक है। इन शिक्षकों ने भ्रांतिपूर्वक माना कि मानवीय लेखकों ने अपने लेखों में कोई योगदान नहीं दिया। आइए एक अन्य लेख की ओर मुड़ें, वह जो दर्शाता है कि पवित्रशास्त्र के मानवीय लेखकों का उनके लेखनों में विशाल योगदान था।

मत्ती 22:41-45 में यीशु और उसका विरोध करने वाले फरीसियों के बीच निम्नलिखित बातचीत को पाते हैं।

> **जब फरीसी इकट्ठे थे, तो यीशु ने उन से पूछा। मसीह के विषय में तुम क्या समझते हो? वह किसकी सन्तान है? उन्होंने उस से कहा, दाऊद की। उस ने उन से पूछा, तो दाऊद आत्मा में होकर उसे प्रभु क्यों कहता है? कि प्रभु ने, मेरे प्रभु से कहा; मेरे दहिने बैठ, जब तक कि मैं तेरे बैरियों को तेरे पांवों के नीचे न कर दूं। भला, जब दाऊद उसे प्रभु कहता है, तो वह उसका पुत्र क्योंकर ठहरा? (मत्ती 22:41-45)**

यहां यीशु ने भजन 110:1 का उल्लेख किया। और उसका तर्क था कि इस पद में पवित्र आत्मा के अर्थ को समझने के लिए पहले यह समझना आवश्यक था कि दाऊद ने इसे लिखा था, और दूसरा उस मूल अर्थ को समझना जो दाऊद दर्शाना चाहता था।

पवित्रशास्त्र के किसी भी भाग के मूल अर्थ को समझने के लिए हमें इसके लेखकों के बारे में बहुत सी बातों को समझना जरूरी है, जैसे कि उनकी परिस्थितियां, उनके अनुभव, उनकी शिक्षा, उनका धर्मविज्ञान और उनकी प्रमुखताएं। और प्रायः इन चीजों के प्रति हमारा ज्ञान अन्य जानकारी के द्वारा बढ़ाया जा सकता है जो हमें बाइबल के बाहर से प्राप्त होती है, जैसे कि ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और भाषायी वास्तविकताएं।

इसके अतिरिक्त हमें पवित्रशास्त्र के लेखकों के लक्ष्यों पर भी ध्यान देना है। उनके उद्देश्य क्या थे? और वे इन पाठकों से किस प्रकार के प्रत्युत्तरों को प्रकट करने का प्रयास कर रहे थे?

इससे आगे हमें उन माध्यमों पर ध्यान देना है जो बाइबलीय लेखकों ने प्रयोग किए थे; जैसे कि भाषा जिनमें उन्होंने लिखा, भाषा की शैली जिनका उन्होंने प्रयोग किया, उनके बातचीत की तकनीक, और उनके विचारों और तर्कों की संरचनाएं।

मसीही नैतिक शिक्षा में पवित्रशास्त्र पर निर्भर रहने के लिए हमें इन सारी वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों का मूल्यांकन करना जरूरी है ताकि हम सीख सकें कि पवित्रशास्त्र के लेखकों ने उन बातों

को क्यों लिखा, और जब उन्होंने लिखा तो उनका अर्थ क्या था, और उनके मूल श्रोताओं ने उन्हें कैसे समझा होगा।

उदाहरण

अब जब हमने पवित्रशास्त्र की प्रेरणा की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति का वर्णन कर लिया है तो हमें बाइबल से एक उदाहरण को देखना है जो प्रकाशन की इन परिस्थिति-संबंधी विशेषताओं पर ध्यान देने के महत्व की पुष्टि करता है।

सच्चाई यह है कि उन सब वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों को पहचानना असंभव है जो पवित्रशास्त्र के किसी विशेष लेख के साथ प्रासंगिक हो, और यह समझना तो छोड़ ही दें कि वे मूल अर्थ से कैसे संबंधित हैं। परन्तु सौभाग्यवश, स्वयं बाइबल ऐसे कई उदाहरणों को दर्शाती है जो हमारी अगुवाई कर सकते हैं। बाइबलीय लेखकों और विश्वसनीय बाइबलीय चरित्रों ने प्रायः पहले के लेखकों के द्वारा लिखे पवित्रशास्त्र को स्पष्ट किया है। और उनके उदाहरण हमें पवित्रशास्त्र के परिस्थिति-संबंधी पहलुओं के महत्व को देखने के अवसर प्रदान करते हैं।

परिस्थिति-संबंधी विचारों को दर्शाने के लिए हमें इसे अपने मन में रखना होगा, आइए हम 1 कुरिन्थियों 10:5-11 को देखें जहां पौलुस ने मरूभमि में इस्राएल के पुराने नियम के वर्णन पर ध्यान केन्द्रित किया। वहां उसने ये शब्द लिखे:

> **परन्तु परमेश्वर उन में के बहुतेरों से प्रसन्न न हुआ, इसलिये वे जंगल में ढेर हो गए। ये बातें हमारे लिये दृष्टान्त ठहरी, कि... हम बुरी वस्तुओं का लालच न करें। और न तुम मूरत पूजनेवाले बनों; जैसे कि उन में से कितने बन गए थे, जैसा लिखा है, कि लोग खाने-पीने बैठे, और खेलने-कूदने उठे। और न हम व्यभिचार करें; जैसा उन में से कितनों ने कियाः एक दिन में तेईस हजार मर गये। और न हम प्रभु को परखें; जैसा उन में से कितनों ने किया, और सांपों के द्वारा नाश किए गए। और न तुम कुड़कुड़ाओ, जिस रीति से उन में से कितने कुड़कुड़ाए, और नाश करनेवाले के द्वारा नाश किए गए। परन्तु ये सब बातें, जो उन पर पड़ी, दृष्टान्त की रीति पर थीं: और वे हमारी चेतावनी के लिये... लिखी गई हैं। (1 कुरिन्थियों 10:5-11)**

इस अनुच्छेद में पौलुस ने पुराने नियम के चार अनुच्छेदों का उल्लेख किया:

- निर्गमन 32, जहां इस्राएली अन्यजातीय मौज-मस्ती में डूब गए और दण्ड के तहत 3000 लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया।
- गिनती 25, जहां उन्होंने लैंगिक अनैतिकता की और 23000 लोग मारे गए।
- गिनती 21, जहां उन्होंने यहोवा की परीक्षा की और अनेक लोग सांपों के द्वारा मारे गए।
- गिनती 16, जहां वे मूसा के विरूद्ध कुड़कुड़ाए और विनाश करने वाले दूत के द्वारा अनेक लोग मारे गए।

परन्तु ध्यान दीजिए कि पौलुस ने इन ऐतिहासिक वर्णनों को ही नहीं दर्शाया। बल्कि, उसने स्पष्ट किया कि मूसा ने इन वर्णनों को इसलिए रखा कि वह भविष्य के पाठकों को एक उदाहरण प्रस्तुत कर सके। जैसा कि पौलुस ने 1 कुरिन्थियों 10:11 में लिखा:

> **ये सब बातें... हमारी चेतावनी के लिये... लिखी गई हैं। (1 कुरिन्थियों 10:11)**

पौलुस ने विश्वास किया कि मूसा ने इस्राएलियों की असफलताओं को दोहराने के विरूद्ध भविष्य की पीढ़ियों को चेतावनी देने के उद्देश्य से पवित्र आत्मा की प्रेरणा से पंचग्रंथ को लिखा। और क्योंकि वह

इस रूप में इन अध्यायों की परिस्थिति को समझ गया था, इसलिए पौलुस ने उन कई वास्तविकताओं को दर्शाया जो इन अनुच्छेदों ने प्रकट की थीं।

पहला, उसने इस वास्तविकता पर ध्यान दिया कि परमेश्वर प्राचीन इस्राएलियों के कार्यों से प्रसन्न नहीं था। मूसा ने इसे उन लेखों में स्पष्टता के साथ कहा था जिनका उल्लेख पौलुस ने किया। दूसरा, पौलुस ने इस वास्तविकता पर ध्यान देते हुए इस बात पर बल दिया कि परमेश्वर ने इन पापों के कारण अनेक इस्राएलियों को मारा; जैसा कि उसने लिखा "वे जंगल में ढेर हो गए"। यह पौलुस के लिए महत्वपूर्ण था क्योंकि इसने इस्राएलियों के प्रति परमेश्वर की कड़ी नैतिक अस्वीकृति को दर्शाया। तीसरा, पौलुस ने इस वास्तविकता के प्रति अपने ध्यान को लगाया कि कुछ विशेष कार्यों ने परमेश्वर को अप्रसन्न कर दिया: जैसे, अन्यजातियों के समान कार्य करना, मूर्तिपूजा, परमेश्वर को परखना और कुड़कुड़ाना।

पौलुस द्वारा विशेष रूप में उल्लिखित इन वास्तविकताओं के अतिरिक्त उसने कई अन्य वास्तविकताओं की संभावना भी प्रकट की, जैसे यह वास्तविकता कि पवित्रशास्त्र सच्चा है, और यह वास्तविकता कि यह आधिकारिक है, और यह वास्तविकता कि यह मसीहियों पर लागू होता है। और ऐसी कई वास्तविकताओं के आधार पर पौलुस इस निष्कर्ष पर पहुंच सका कि मूसा का लक्ष्य भविष्य की पीढ़ियों हेतु इन बातों को लिखने के लिए प्रेरणा-प्राप्त पवित्रशास्त्र के माध्यमों का प्रयोग करना था ताकि वे इस्राएलियों की गलतियों से सीख सकें।

हमारे पास यहां पौलुस की नीति के सारे भेदों को खोजने का समय नहीं है। परन्तु इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि जब उसने पुराने नियम के इन प्रेरणा-प्राप्त लेखों की व्याख्या की तो वह कम से कम दो प्रकार के परिस्थिति-संबंधी विषयों को दर्शाना चाहता था।

- पहला, पवित्रशास्त्र में दर्शाए गए विवरण- पौलुस ने पुराने नियम को वास्तविक और विश्वसनीय के रूप में स्वीकार किया, और वह जानता था कि कहानियों के विवरण उनके अर्थों के लिए महत्वपूर्ण थे।
- दूसरा, लेखक का अभिप्राय- पौलुस समझ गया था कि मूसा का लक्ष्य हमें यह बताना नहीं था कि काफी समय पहले क्या हुआ था। बल्कि उसने अपने पाठकों से एक प्रत्युत्तर पाने के लिए लिखा था।

अब यह सूची पूरी तरह से व्यापक नहीं है, परन्तु यह परिस्थिति-संबंधी विशेषताओं के प्रकारों का एक अच्छा और एक आधिकारिक उदाहरण है जिस पर हमें पवित्रशास्त्र की व्याख्या करते समय ध्यान देना चाहिए। हमें उन बातों पर ध्यान देना चाहिए जिन्हें पवित्रशास्त्र स्पष्टता के साथ दिखाता है, जैसे इसके द्वारा दर्शाए गए वास्तविक या तथ्यपूर्ण विवरण। और हमें उन बातों पर भी ध्यान देना चाहिए जो पवित्रशास्त्र में अप्रत्यक्ष रूप से पाई जाती हैं, जैसे कि लेखन में लेखक का अभिप्राय और लक्ष्य। इन और अन्य रूपों में पवित्रशास्त्र की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति को याद करने के द्वारा हमारे भीतर एक बड़ा आत्मविश्वास आ सकता है कि हमने इसे सही तरीके से समझा है।

अब जब हमने यह देख लिया है कि किस प्रकार प्रकाशन की विषय-वस्तु हमारी परिस्थिति की वास्तविकताओं, लक्ष्यों, और माध्यमों को संबोधित करती है, और प्रकाशन की ऐतिहासिक रूप से स्थित प्रकृति को भी देख लिया है, तो हमें हमारा ध्यान प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी चरित्र के साथ व्यवहार करने वाली लोकप्रिय नीतियों पर लगाना चाहिए।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

प्रकाशन के प्रति नीतियां

जब हम परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण से मसीही नैतिक शिक्षा को क्रियान्वित करते हैं तो हमारे सामने चुनौती यह होती है कि हम दो परिस्थितियों से व्यवहार कर रहे हैं, पवित्रशास्त्र की परिस्थिति और वर्तमान परिस्थिति। और इसका अर्थ है कि हमें पवित्रशास्त्र की परिस्थिति को हमारी वर्तमान परिस्थिति के साथ जोड़ने के तरीकों को ढूंढ़ना होगा। यह प्रक्रिया प्रायः काफी जटिल होती है और दुर्भाग्यवश मसीहियों में छोटे रास्तों को ढूँढने की प्रवृति होती है जो विषयों को बहुत ही ज्यादा सरल बना देते हैं। इसलिए, इससे पहले कि हम वर्तमान प्रयोग को संबोधित करें, हमें उन कुछ भ्रांतिपूर्ण नीतियों पर ध्यान देना चाहिए जो मसीही प्रायः ग्रहण कर लेते हैं।

हमारी चर्चा में हम प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी चरित्र के साथ व्यवहार करने की तीन लोकप्रिय नीतियों को स्पर्श करेंगे: पहली, हम शिथिलता की नीति के बारे में बात करेंगे। दूसरी, हम कड़ाई की नीति के बारे में बात करेंगे। और तीसरी, हम उस नीति के बारे में बात करेंगे जो मानवीय अधिकार का पक्ष लेती है। समय बचाने के लिए हम स्वयं को पवित्रशास्त्र पर चर्चा करने तक ही सीमित रखेंगे। परन्तु पुनः, हमें इस बारे में सचेत रहना चाहिए कि इन्हीं नीतियों का प्रकाशन के अन्य प्रकारों के लिए भी प्रयोग किया जाता है।

वर्तमान संसार के साथ पवित्रशास्त्र को जोड़ने की मुश्किल को दर्शाने के लिए आइए एक ऐसी भूमि पर बने हुए घर की कल्पना करें जो धीरे-धीरे खतरनाक जंगल के सामने हार मान लेता है। यह घर उन बातों को प्रस्तुत करता है जिनकी अनुमति या आज्ञा पवित्रशास्त्र में स्पष्ट रूप से दी गई है। जंगल उन बातों को प्रस्तुत करता है जो बाइबल में स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित हैं। घर के आस-पास की भूमि उन बातों को प्रस्तुत करती है जो किसी न किसी रूप में बाइबल पढ़ने वाले व्यक्ति के लिए अस्पष्ट हैं; अर्थात् ऐसे विषय जिनके बारे में हम निश्चित नहीं हैं कि पवित्रशास्त्र की परिस्थितियों को वर्तमान संसार की परिस्थितियों से कैसे जोड़ा जाए। स्पष्टता की इस कमी ने प्रायः मसीहियों को मसीही नैतिकता की सीमाओं को परिभाषित करने के लिए सरल नीतियों को स्वीकार करने की ओर अगुवाई की है; ऐसी नीतियां जिनका वर्णन हम शिथिलता, कड़ाई और मानवीय अधिकार के रूप में कर रहे हैं। अतः, आइए हम शिथिलता के साथ आरंभ करें जो प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी पहलुओं को वर्तमान संसार के साथ जोड़ने की लोकप्रिय परन्तु एक भ्रांतिपूर्ण नीति है।

शिथिलता

शिथिलता के बारे में हमारी चर्चा तीन भागों में विभाजित होगी: पहला, हम इस नीति और इसके कारणों का वर्णन प्रदान करेंगे। दूसरा, हम शिथिलता के परिणामों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। और तीसरा, हम कुछ सुधारों की सलाह देंगे जो पवित्रशास्त्र के हमारे प्रयोग में शिथिलता को दूर करने में सहायता कर सकते हैं। आइए, शिथिलता के आधारभूत वर्णन के साथ आरंभ करें।

वर्णन

शिथिलता एक ऐसी नीति है जिसकी प्रवृति ढ़ीलेपन की ओर होती है जिससे इस नीति का प्रयोग करने वाले वर्तमान संसार में पापों को पहचानने और उसकी निंदा करने में ढ़ीले होते हैं। परिणामस्वरूप, वे प्रायः ऐसी बातों की अनुमति दे देते हैं जिसके बाइबल प्रतिबंधित करती है और उसे नजरअंदाज कर देते हैं जिसकी बाइबल आज्ञा देती है।

मसीही कम से कम दो कारणों से पवित्रशास्त्र के पाठन को शिथिल बना देते हैं। कभी-कभी वे गलत रीति से मानते हैं कि बाइबल की परिस्थितियां वर्तमान जीवन की परिस्थितियों से इतनी अलग हैं कि बाइबल को आज हमारे समय में लागू नहीं किया जा सकता। अन्य समयों में, मसीही इसलिए

शिथिलता की नीति को अपनाते हैं क्योंकि वे मानते हैं कि बाइबल की परिस्थितियां वर्तमान जीवन में इसलिए लागू नहीं की जा सकतीं क्योंकि वे बहुत अधिक धुंधली हैं। प्रायः यह इसलिए होता है क्योंकि वे सोचते हैं कि बाइबल में वास्तविकताएं, लक्ष्य, और माध्यम अस्पष्ट हैं, या अबूझ हैं।

उस घर के बारे में दिए गए हमारे उदाहरण के विषय में सोचें जो ऐसी भूमि से घिरा हुआ है जो धीरे-धीरे खतरनाक जंगल के सामने हार मान लेती है। जैसा कि आपको याद होगा, घर उन बातों को याद दिलाता है जिनकी अनुमति पवित्रशास्त्र में दी गई है। जंगल उन बातों को दर्शाता है जो पूरी तरह से बाइबल में निषेध हैं। घर के आस-पास की भूमि उन विषयों को दर्शाती है जिनमें पवित्रशास्त्र के निर्देश पाठको के लिए अस्पष्ट प्रतीत होते हैं।

अब कल्पना कीजिए कि हम उन बातों के चारों और बाड़ा लगाना चाहते हैं, ताकि हम मसीही नैतिकता की सीमाओं को परिभाषित कर सकें। शिथिलता की नीति जितना संभव हो सके जंगल के कोने पर बाड़ लगाने की कोशिश करेगी ताकि उन बातों को अनुमति दे सके जो अस्पष्ट हैं।

परन्तु इस शिथिल क्रिया में एक समस्या है। हर वह बात जो हमारे लिए अस्पष्ट है वह ग्रहणयोग्य नहीं है। अतः, यदि हम जंगल के कोने पर बाड़ लगाते हैं, तो हम निश्चित रूप से उन बातों को अनुमति दे देंगे जिसे पवित्रशास्त्र वास्तव में रोकता है।

अतः, चाहे फिर यह संभावना प्रकट करने के द्वारा कि बाइबलीय परिस्थिति हमारी परिस्थिति से इतनी भिन्न है कि हम इसे लागू नहीं कर सकते, या फिर इस बात पर बल देने के द्वारा कि यह इतना अस्पष्ट है कि इसे आत्मविश्वास के साथ लागू नहीं किया जा सकता, शिथिल धारणा मसीही व्यवहार पर बहुत ही कम प्रतिबन्ध लगाती प्रतीत होती है।

शिथिलता की नीति के इस वर्णन को मन में रखते हुए, हमें उन परिणामों के कुछ उदाहरणों का उल्लेख करना चाहिए जो प्रकाशन के प्रति ऐसे दृष्टिकोण से निकल सकते हैं।

परिणाम

शिथिलता के परिणामों को सरलता से देखा जा सकता है: शिथिलता की नीति मसीहियों को अनेक पापों को न्यायसंगत ठहराने के लिए उत्साहित करती है। हम उन अनेक रूपों में से चार का उल्लेख करेंगे जो हो सकते हैं। पहला, शिथिलता मसीहियों को कई गलत बातों में से कम गलत बात को चुनने से संतुष्ट रहने को उत्साहित करती है, और इसके द्वारा उन्हें इस आधार पर एक गलत कार्य को न्यायसंगत ठहराने की ओर ले जाती है जो दूसरे कार्य से अधिक धर्मी प्रतीत होता है।

ऐसे पति और पत्नी के बारे में सोचें जो हमेशा एक-दूसरे की निंदा करते रहते हों। अब हम जानते हैं कि बाइबल बिना किसी उचित कारण के तलाक की निंदा करती है और यह पति-पत्नी को एक दूसरे से प्यार करने की मांग करती है। परन्तु जो मसीही एक शिथिल दृष्टिकोण को अपनाते हैं वे यह तर्क दे सकते हैं कि बाइबल इस बारे में अस्पष्ट है कि इस विशेष परिस्थिति में मसीहियों को क्या करना चाहिए। और वे इस आधार पर तलाक की सलाह दे सकते हैं कि घृणापूर्ण संबंध से बेहतर यही प्रतीत होता है।

परन्तु जब हम पवित्रशास्त्र की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और साधनों का मूल्यांकन करते हैं तो हम पाते हैं कि यह इस नई परिस्थिति के बारे में काफी स्पष्टता से बात करता है। सारे पतियों और पत्नियों के लिए पवित्रशास्त्र के नैतिक निर्देशों को मानने का एक सच्चा समाधान अपने पापों से पश्चाताप करने और विवाह के बंधन में एक दूसरे से प्रेम करना सीखने के द्वारा है।

दूसरा, शिथिलता बाइबल की आज्ञाओं के प्रति अनुचित अपवादों की अनुमति देती प्रतीत होती है। यह प्रायः तब होता है जब मसीही लोग यह नहीं देख पाते कि पवित्रशास्त्र की आज्ञाएं बाइबल में उल्लिखित विशेष परिस्थितियों से बाहर की परिस्थितियों पर भी लागू होती हैं।

उदाहरण के तौर पर, यीशु के दिनों में कुछ लोग मानते थे कि यदि उन्होंने शारीरिक व्यभिचार नहीं किया तो उन्होंने व्यभिचार के विरूद्ध दी गई आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया। वे शारीरिक अधार्मिकता के

बाहर की परिस्थितियों में व्यभिचार के विरूद्ध दी गई आज्ञा के सच्चे अर्थों को देखने में शिथिल थे। परन्तु मत्ती 5:28 में यीशु ने उन्हें यह कहते हुए समझाया:

> **जो कोई किसी स्त्री पर कुदृष्टि डाले वह अपने मन में उस से व्यभिचार कर चुका। (मत्ती 5:28)**

जब हम व्यभिचार के विरूद्ध दी गई आज्ञा से संबंधित वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों को नहीं सीखते हैं तो हम आसानी से कह सकते हैं कि व्यभिचार और कामुकता परमेश्वर की इच्छा का उल्लंघन नहीं करते।

तीसरा, शिथिलता मसीहियों को बाइबल की आज्ञाओं में झूठी बातों को जोड़ने के लिए उत्साहित करती है। वे ऐसी वास्तविकताओं, लक्ष्यों या माध्यमों की कल्पना करते हैं जिन्हें बाइबल नहीं दर्शाती और इन काल्पनिक बातों को पवित्रशास्त्र की आज्ञाओं को नजरअंदाज करने के बहानों के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

उदाहरण के तौर पर, व्यवस्थाविवरण 25:4 में व्यवस्था दांवते समय बैल का मुंह बांधने को मना करती है। और पवित्रशास्त्र के प्रति एक शिथिल नीति शायद एक झूठी बात की कल्पना करेगी कि यह पद केवल उन लोगों पर लागू होता है जो अनाज को दांवने का काम करते हैं। हम अपने में सोच सकते हैं, "मेरे पास तो बैल नहीं हैं; इसलिए यह आज्ञा मुझ पर लागू नहीं होती।" परन्तु 1 कुरिन्थियों 9:9 और 1 तीमुथियुस 5:18 में पौलुस ने यह प्रमाणित करने के लिए इस नियम का प्रयोग किया कि मसीहियों को उनके प्रयासों के लिए धन दिया जाना चाहिए। ऐसे विषयों में एक शिथिल नीति मसीहियों को उन परिस्थितियों से बाहर बाइबल की आज्ञाओं के सिद्धांतों को लागू करने से रोकती है जो पवित्रशास्त्र की परिस्थितियों से भिन्न होती हैं।

चौथा, शिथिलता की नीति हमें यह सोचने पर मजबूर कर सकती है कि अच्छे उद्देश्य कभी-कभी बुरे कार्यों को नजरअंदाज कर देते हैं। अर्थात्, जब हम यह मानते हैं कि पवित्रशास्त्र की वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम बहुत ही अलग और अस्पष्ट हैं तो हम कार्यों का हमारे वर्तमान उद्देश्यों के ही आधार पर आकलन करने की ओर झुक सकते हैं।

उदाहरण के तौर पर, हम में से बहुत लोग भूख से तड़प रहे एक व्यक्ति को भोजन चुराने के लिए माफ कर सकते हैं। अब यह सही बात है कि खाने के लिए चोरी करने वाले व्यक्ति का उद्देश्य उस व्यक्ति से भिन्न होगा जो अपने फायदे के लिए चोरी करता है। परन्तु फिर भी, परमेश्वर का वचन दोनों कार्यों की निंदा करता है। जैसा कि हम नीतिवचन 6:30-31 में पढ़ते हैं:

> **जो चोर भूख के मारे अपना पेट भरने के लिये चोरी करे, उसको तो लोग तुच्छ नहीं जानते; तौभी यदि वह पकड़ा जाए, तो उसको सातगुणा भर देना पड़ेगा; चाहे उसे अपने घर का सारा धन देना पड़े। (नीतिवचन 6:30-31)**

सारांश में, शिथिलता की नीति बहुत अधिक अनुमतिदायक होती है, यह उसकी अनुमति देती है जिसे परमेश्वर करने से रोकता है और इसलिए हमसे हमारे सच्चे कर्त्तव्य को छिपाती है। यह हमें परमेश्वर की व्यवस्था के विवरण को जितनी संभव हो सके हमारी उतनी व्यक्तिगत अनुमति के साथ निर्देशित करने के लिए उत्साहित करता है, और हमेशा ऐसे मार्गों की खोज में रहती है जिससे इसकी जिम्मेदारियों को टाला जा सके।

शिथिलता के वर्णन और परिणामों पर ध्यान देने के बाद अब हम प्रकाशन के प्रति इस भ्रांतिपूर्ण नीति के लिए कुछ सुधारों के सुझाव देंगे।

सुधार

जैसा कि हम कह चुके हैं, शिथिलता सामान्यतः या तो इस धारणा पर आधारित होती है कि पवित्रशास्त्र इतना भिन्न है कि इसे लागू नहीं किया जा सकता, या फिर इस धारणा पर कि यह इतना अस्पष्ट है कि लागू करने के योग्य नहीं। अतः, इस भ्रांति को दूर करने का सबसे अच्छा तरीका वर्तमान संसार के साथ बाइबल की समानता और इसकी स्पष्टता को समझना है।

एक ओर जहां बाइबल हमें आश्वस्त करती है कि पवित्रशास्त्र की परिस्थितियां हमारी अपनी परिस्थितियों से पर्याप्त रूप में समान हैं जिससे कि हम वर्तमान परिस्थितियों पर इसे लागू कर सकें। किसी न किसी रूप में, बाइबल का हर अनुच्छेद आधुनिक संसार में हमें नैतिक शिक्षा के बारे में कुछ न कुछ अवश्य सिखाता है। जैसा कि पौलुस ने 2 तीमुथियुस 3:16-17 में लिखा:

> **हर एक पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है और उपदेश, और समझाने, और सुधारने, और धर्म की शिक्षा के लिये लाभदायक है। ताकि परमेश्वर का जन सिद्ध बने, और हर एक भले काम के लिये तत्पर हो जाए। (2 तीमुथियुस 3:16-17)**

जब कभी भी हम यह सोचने की परीक्षा में पड़ते हैं कि बाइबल इसलिए लागू नहीं की जा सकती क्योंकि इसकी परिस्थितियां हमारी परिस्थितियों से भिन्न हैं, तो हमें पवित्रशास्त्र से जुड़ी वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों एवं वर्तमान जीवन की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों दोनों को गहराई से देखने की आवश्यकता है। यदि हम ऐसा करते हैं तो हम कुछ ऐसी बातों को पा सकते हैं जो पवित्रशास्त्र को लागू करने में हमारी सहायता करती हैं। परन्तु यदि हम यह भी पाते हैं कि पवित्रशास्त्र और वर्तमान जीवन की परिस्थितियां भिन्न-भिन्न प्रतीत होती हैं, तो भी हमें यह नहीं मान लेना चाहिए कि बाइबल लागू करने योग्य नहीं है। बल्कि हमें हमारी सीमितताओं को मान लेना चाहिए और उस विषय का और अधिक अध्ययन करना चाहिए एवं पासवानों और बाइबल के शिक्षकों से निर्देशों को प्राप्त करना चाहिए।

दूसरी ओर बाइबल की अस्पष्टता के विषय में बाइबल यह भी सिखाती है कि पवित्रशास्त्र पूरी तरह से स्पष्ट है। जैसा कि मूसा ने व्यवस्थाविवरण 29:29 में लिखा:

> **गुप्त बातें हमारे परमेश्वर यहोवा के वश में हैं; परन्तु जो प्रगट की गई हैं वे सदा के लिये हमारे और हमारे वंश में रहेंगी, इसलिये कि इस व्यवस्था की सब बातें पूरी ही जाएं। (व्यवस्थाविवरण 29:29)**

परमेश्वर ने हमें हमारे कर्तव्य का ज्ञान देने के लिए पवित्रशास्त्र को प्रदान किया। और उसने इसकी रचना केवल मूल श्रोताओं के लिए ही नहीं की, बल्कि भावी पीढ़ियों के लिए भी की, या जैसा कि हम यहां पढ़ते हैं हमारे वंश के लिए भी।

बाइबल सारे क्षेत्रों में एकसमान स्पष्ट नहीं है, और हर कोई व्यक्ति हर अनुच्छेद को नहीं समझ सकता। परन्तु पवित्रशास्त्र इतना स्पष्ट है कि इससे नैतिक प्रयोगों को समझा जा सकता है। अतः, जब कभी भी हम यह सोचने लगते हैं कि बाइबल अस्पष्ट है तो हमें यह याद रखना चाहिए कि कमी हमारे अंदर है, न कि पवित्रशास्त्र में। और इस कमी को दूर करने के लिए हमें पवित्रशास्त्र की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों का पुनरावलोकन करने की आवश्यकता है ताकि हम उसके मूल अर्थ को समझ सकें। कभी-कभी यह हमें पवित्रशास्त्र को ऐसे समझने में सहायता करेगा कि हम वर्तममान जीवन में इसे लागू कर सकें। और यदि ऐसा नहीं होता तो हमें हमारी सीमितता को मान लेना चाहिए, उस विषय का अध्ययन निरंतर करते रहना चाहिए एवं उनसे सलाह लेनी चाहिए जो हमसे अधिक बुद्धिमान हैं।

शिथिलता की नीति को अपनाने में उत्पन्न होने वाली भ्रांतियों को देखने के बाद, अब हमें उन भ्रांतियों की ओर देखना चाहिए जो हमारी समझ और पवित्रशास्त्र के प्रयोग में कड़ाई की नीति से उत्पन्न होती हैं।

कड़ाई

कड़ाई की नीति के बारे में हमारी चर्चा शिथिलता की नीति की चर्चा के समान ही आगे बढ़ेगी। पहला, हम एक नीति के रूप में कड़ाई के सामान्य वर्णन को प्रस्तुत करेंगे। दूसरा, हम कड़ाई के परिणामों के उदाहरण प्रदान करेंगे। और तीसरा, हम कुछ ऐसे सुधारों का सुझाव देंगे जो खराब नीति को हटाने में हमारी सहायता कर सकते हैं। आइए कड़ाई की नीति के वर्णन के साथ आरंभ करें।

वर्णन

जब मसीही प्रकाशन के प्रति एक कड़ाईपूर्ण नीति को मानने की ओर झुकते हैं, तो वे पाप से बचने पर बहुत अधिक महत्व देते हैं, विशेषकर पवित्रशास्त्र में दर्शाए गए प्रतिबंधों को मानने में। फलस्वरूप, वे इसकी अनुमति देने की ओर नहीं बल्कि इसके प्रति बहुत अधिक कड़े व्यवहार को रखने के कारण गलती करते हैं।

शिथिलता की नीति के समान, कड़ाई की नीति भी सामान्यतः वर्तमान संसार के प्रति बाइबल की समानता और इसकी स्पष्टता के विषय की गलत धारणाओं से निकलती है।

वर्तमान संसार के प्रति बाइबल की समानता के विषय में कड़ाई की नीति प्रायः बाइबल की परिस्थितियों को हमारी परिस्थितियों के इतना समान मानती है कि बाइबल हमारे जीवनों पर प्रत्यक्ष रूप से लागू होती है। यह नीति उन मार्गों को महत्व नहीं देती जिनमें पवित्रशास्त्र की वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम वर्तमान संसार की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों से भिन्नता रखते हैं। ऐसे मसीह जो इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं, प्रायः तर्क देते हैं कि इसे सही प्रकार से तभी लागू किया जा सकता है जब ठीक वैसा ही किया जाए जिसकी अपेक्षा बाइबल के समय में की गई थी।

और बाइबल की स्पष्टता के विषय में ऐसे मसीही जो कड़ाईपूर्ण नीति का समर्थन करते हैं, वे गलत रूप से मानते हैं कि जब बाइबल की वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम अस्पष्ट प्रतीत होते हैं तो एक उचित प्रत्युत्तर यह होता है कि पवित्रशास्त्र को कड़े रूपों में लागू किया जाएं।

घर और बाड़े के उदाहरण को याद कीजिए। पुनः घर उन बातों को दर्शाता है जिनकी पवित्रशास्त्र में स्पष्टता से अनुमति दी गई है और जंगल उन बातों को दर्शाता जो बाइबल में स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित हैं। और घर के चारों ओर की भूमि उन बातों को दर्शाती है जो किसी न किसी रूप में हमारे समक्ष अस्पष्ट होते हैं जब हम बाइबल पढ़ते हैं, अर्थात् ऐसे विषय जिनमें हम निश्चित नहीं होते कि पवित्रशास्त्र में सिखाई गई वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम वर्तमान संसार की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों से कैसे जुड़े होते हैं।

और फिर से कल्पना कीजिए कि हम उन बातों के चारों ओर बाड़ा लगाना चाहते हैं जिनकी अनुमति पवित्रशास्त्र देता है ताकि हम मसीही नैतिकता की सीमाओं को परिभाषित कर सकें। जैसा कि हमने देखा, शिथिलता की नीति जंगल के किनारे पर बाड़े को बांधेगी ताकि वह ऐसे व्यवहारों को भी अनुमति दे सके जिनकी निंदा पवित्रशास्त्र स्पष्टता से नहीं करता। परन्तु इसके विपरीत, कड़ाई की नीति घर के बिल्कुल निकट बाड़े को बांधने का प्रयास करेगी जिससे कि वह उन सबको प्रतिबंधित कर सके जो अस्पष्ट हैं, ताकि अनैतिकता में गिरने से बचा जा सके।

परन्तु इस कठोर क्रिया के साथ भी एक समस्या है: उस भूमि पर बाड़े के बाहर भी ऐसी बहुत सी बातें हैं जिनकी पवित्रशास्त्र में वास्तव में अनुमति या आज्ञा दी गई है। जब हम ऐसे प्रतिबंधात्मक रूपों में

बाइबल की शिक्षाओं के प्रति प्रत्युत्तर देते हैं तो हम प्रायः ऐसी बातों को प्रतिबंधित कर देते हैं जिनकी परमेश्वर अनुमति देता है और ऐसी बातों को भी जिनकी परमेश्वर वास्तव में आज्ञा देता है।

अतः, चाहे यह कल्पना करने के द्वारा कि बाइबल की परिस्थितियां हमारी अपनी परिस्थितियों के बहुत समान कि हम उन्हें लागू कर सकते हैं, या फिर बाइबल की अस्पष्टता के प्रति अनुचित कड़ाई के साथ प्रत्युत्तर देने के द्वारा, कड़ा दृष्टिकोण मसीही व्यवहार पर बहुत अधिक सीमितताओं को रखता प्रतीत होता है।

इस वर्णन को मन में रखते हुए हम कड़ाई की नीति के परिणामों के बारे में बात करने के लिए तैयार हैं।

परिणाम

इस कड़ाईपूर्ण दृष्टिकोण के अनेक नकारात्मक परिणाम हैं, अतः समय की सीमितता के कारण हम केवल दो का ही उल्लेख करेंगे। पहला, यह ऐसे व्यवहारों को प्रतिबंधित करने के द्वारा मसीही स्वतंत्रता को नष्ट करता है जो कुछ दशाओं में तो बुरे होते हैं परन्तु अन्य दशाओं में अच्छे होते हैं।

बाइबल सिखाती है कि मसीहियों के पास विवेक की स्वतंत्रता है। अर्थात् ऐसे कुछ कार्य होते हैं जो कुछ लोगों के लिए अच्छे होते हैं परन्तु दूसरे लोगों के लिए बुरे हो सकते हैं। इसके अच्छे उदाहरण 1 कुरिन्थियों 8-10 में पौलुस द्वारा मूर्तियों को चढ़ाए गए भोजन के बारे में चर्चा, और रोमियों अध्याय 14 में मांस खाने और विशेष दिनों का पालन करने की ऐसी ही चर्चा है। इन अध्यायों में पौलुस ने दर्शाया कि मूर्तियों को चढ़ाया हुआ भोजन खाना उन लोगों के लिए स्वीकार्य है जिनका विवेक मजबूत है परन्तु उनके लिए पापमय है जिनका विवेक कमजोर है। इसके प्रकाश में, पौलुस ने मापदण्ड दिया कि कौन, किन परिस्थितियों में यह भोजन खा सकता है, परन्तु अंतिम निर्णय एक व्यक्ति के विवेक पर निर्भर करता है।

क्योंकि विवेक के विषय प्रायः अस्पष्ट होते हैं, इसलिए कड़ाई की नीति प्रायः हरेक को ऐसा भोजन करने से रोकती है ताकि यह निश्चित किया जा सके कि किसी ने अपने विवेक का उल्लंघन नहीं किया। परन्तु यह मजबूत विवेक के मसीहियों को परमेश्वर की आशीषों को प्राप्त करने से अवश्य रोकता है। और पौलुस ने सिखाया कि ऐसे एकमुश्त प्रतिबंध गलत हैं। जैसा कि उसने 1 तीमुथियुस 4:4-5 में लिखा:

> **क्योंकि परमेश्वर की सृजी हुई हर एक वस्तु अच्छी हैः और कोई वस्तु अस्वीकार करने के योग्य नहीं; पर यह कि धन्यवाद के साथ खाई जाए। क्योंकि परमेश्वर के वचन और प्रार्थना के द्वारा शुद्ध हो जाती है। (1 तीमुथियुस 4:4-5)**

दूसरा, कड़ाई की नीति परमेश्वर के वचन को एक बड़े बोझ में बदलने के द्वारा विश्वासियों में निराशा भर देती है। परमेश्वर ने अपने लोगों को आशीष देने के लिए अपना वचन दिया, न कि उनका शोषण करने के लिए। और पवित्रशास्त्र में ऐसे कई उदाहरण हैं जो इस विचार को दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, मरकुस 2:27 में यीशु के शब्दों को सुनें:

> **सब्त का दिन मनुष्य के लिये बनाया गया है, न कि मनुष्य सब्त के दिन के लिये। (मरकुस 2:27)**

यीशु ने सिखाया कि परमेश्वर ने सब्त की आज्ञा लोगों को आशीष देने के लिए दी थी।

और रोमियों 9:4-5 में पौलुस ने परमेश्वर द्वारा इस्राएल को दी गईं अद्‌भुत आशीषों की सूची में व्यवस्था को भी शामिल किया। सुनिए उसने वहां क्या लिखा:

> **वे इस्राएली हैं; और लेपालकपन का हक और महिमा और वाचाएं और व्यवस्था और उपासना और प्रतिज्ञाएं उन्हीं की हैं। पुरखे भी उन्हीं के हैं, और मसीह भी**

> शरीर के भाव से उन्हीं में से हुआ, जो सब के ऊपर परम परमेश्वर युगानुयुग धन्य है। आमीन। (रोमियों 9:4-5)

इस बात पर कोई विवाद नहीं होगा कि इस सूची की हर अन्य बात एक बड़ी आशीष है। इसलिए, पौलुस ने व्यवस्था के पाए जाने को क्यों शामिल किया? उत्तर सरल है- क्योंकि व्यवस्था वास्तव में परमेश्वर के लोगों के लिए उसकी एक बड़ी आशीष है।

दुर्भाग्यवश, किसी भी ऐसी बात की निंदा करने की प्रवृति जिसकी स्पष्ट अनुमति नहीं दी गई होती परमेश्वर के वचन को प्रतिबंधों की एक लम्बी सूची में परिवर्तित करने की ओर झुकती है। और यह मसीहियों को नियमों या व्यवस्था को मानने में इतनी चिंतामग्न कर देती है कि वे परमेश्वर को एक प्रेमी पिता के रूप में समझने की अपेक्षा एक कठोर रूप से काम लेने वाला समझने लगते हैं। कई बल्कि यह भी महसूस करते हैं कि जब वे अपने द्वारा ही लागू किए गए कठोर स्तरों के अनुसार नहीं जी पाते तो परमेश्वर उनसे अप्रसन्न हो जाता है।

सारांश में, कड़ाई की नीति मसीही स्वतंत्रता का इनकार करती है, और निराशा की ओर हमें प्रेरित करती है। इन रूपों में, यह हमारे कर्त्तव्य को सीखने के हमारे प्रयासों में रूकावट बनती है और हमारे उद्धार के परमेश्वर में आनंद लेने की हमारी योग्यता को बाधित करती है।

कड़ाई के हमारे वर्णन और इसके कुछ परिणामों को प्रस्तुत करने के बाद अब हमें कुछ सुधारों की ओर मुड़ना चाहिए जो हमें इस भ्रांति से बचा सकते हैं।

सुधार

जैसा कि हम देख चुके हैं, कड़ाई की नीति सामान्यतः दो भ्रान्तियों में से एक पर निर्भर होती है। एक ओर, यह ऐसी गलत धारणा से पैदा हो सकती है कि पवित्रशास्त्र की परिस्थिति-संबंधी विशेषताएं हमारी परिस्थितियों के इतनी समान हैं कि बाइबल वर्तमान संसार पर प्रत्यक्ष रूप से लागू की जा सकती है। दूसरी ओर, यह ऐसे गलत दृष्टिकोण से भी पैदा हो सकती है कि पवित्रशास्त्र की वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम अस्पष्ट और यहां तक कि अज्ञेय हैं।

अतः कड़ाई के प्रति एक अच्छा सुधार यह महसूस करना होगा कि वर्तमान परिस्थितियां बाइबल की परिस्थितियों से काफी भिन्न हैं इसलिए हम पवित्रशास्त्र में पाए जाने वाले प्रयोगों को एकपक्षीय रूप में उसी प्रकार से लागू नहीं कर सकते। बल्कि हमें हमारी और बाइबल की परिस्थतियों के बीच की भिन्नता को महत्व देना जरूरी है। उदाहरण के लिए निर्गमन 20:13 की आज्ञा पर ध्यान दीजिए:

> तू हत्या न करना। (निर्गमन 20:13)

इस आज्ञा को वर्तमान जीवन के कुछ पहलुओं पर प्रत्यक्ष रूप से लागू किया जा सकता है। उदाहरण के रूप में, यह देखना सरल है कि यह आज्ञा संपत्ति चुराने के लिए किसी की हत्या करने से रोकती है।

परन्तु इस आज्ञा को वर्तमान जीवन पर तब लागू करना कठिन हो जाता है जब हम आत्मरक्षा या युद्ध जैसी परिस्थितियों को देखते हैं। कड़ाई की नीति किसी भी रूप में मनुष्य की हत्या करने से रोकेगी, क्योंकि इसकी धारणा है कि यह आज्ञा ऐसी सारी परिस्थितियों को एकसमान रूप में संबोधित करती है। परन्तु यह निष्कर्ष पवित्रशास्त्र के उस अनुच्छेद से असंगत है जहां इस्राएल के सैन्य योद्धाओं को परमेश्वर के शत्रुओं को मारने पर आशीष मिलती है। उदाहरण के लिए, इब्रानियों 11:32-33 से इन वचनों को सुनें:

> समय नहीं रहा, कि गिदोन का, और बाराक और शिमशौन का, और यिफतह का, और दाऊद का और शमूएल का, और भविष्यवक्ताओं का वर्णन करूं। इन्होंने

> विश्वास ही के द्वारा राज्य जीते; धर्म के काम किए; प्रतिज्ञा की हुई वस्तुएं प्राप्त की। (इब्रानियों 11:32-33)

ध्यान दें कि पहली बात जिनके लिए इन लोगों की प्रशंसा की गई है वह यह है कि उन्होंने राज्यों पर विजय प्राप्त की है। वे सैन्य अगुवे और न्यायी थे जिन्हें युद्ध में परमेश्वर के शत्रुओं को पराजित करने में बड़ी सफलता मिली थी।

ऐसे तथ्यों के प्रकाश में हमें हत्या के विरूद्ध दी गई आज्ञा के प्रति बाइबल पर और अधिक आधारित दृष्टिकोण को लागू करने का प्रयास करना चाहिए। हमें यह पहचानना जरूरी है कि हत्या के विरूद्ध दी गई आज्ञा में संबोधित की गई परिस्थितियां युद्ध और आत्मरक्षा जैसी परिस्थितियों के समान नहीं हैं। और हमें बाइबल के अन्य अनुच्छेदों को भी देखना चाहिए जो इन विषयों के बारे में बात करते हैं और ऐसे निष्कर्षों की खोज करनी चाहिए जो सारे पवित्रशास्त्र के अनुसार हों। एवं निष्कर्ष विषय दर विषय और व्यक्ति दर व्यक्ति भिन्न-भिन्न होंगे।

बाइबलीय और वर्तमान परिस्थितियों के बीच भिन्नता के उचित दृष्टिकोण को प्राप्त करने के अतिरिक्त हम यह याद रखने के द्वारा भी कड़ाई की नीति को टाल सकते हैं कि पवित्रशास्त्र मसीही नैतिक शिक्षा के विषय में परमेश्वर की इच्छा को दर्शाने के लिए पर्याप्त रूप से स्पष्ट है। शिथिलता के सुधार के बारे में बात करते समय इस सुधार के बारे में हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं। परन्तु एक तकाजे के रूप में आइए व्यवस्थाविवरण 29:29 में मूसा के शब्दों को पुनः सुनें:

> गुप्त बातें हमारे परमेश्वर यहोवा के वश में हैं; परन्तु जो प्रगट की गई हैं वे सदा के लिये हमारे और हमारे वंश में रहेंगी, इसलिये कि इस व्यवस्था की सब बातें पूरी हो जाएं। (व्यवस्थाविवरण 29:29)

परमेश्वर ने पवित्रशास्त्र इसलिए दिया कि प्राचीन इस्राएली और इसके साथ-साथ हम जैसे भावी वंश अपने कर्त्तव्य को जान लें। और इसका अर्थ यह है कि पवित्रशास्त्र की वास्तविकताएं, लक्ष्य और माध्यम हमारे समक्ष पर्याप्त रूप से इतने स्पष्ट हैं कि हम हमारी जिम्मेदारियों को पहचान सकें ताकि हमें कड़ाई जैसी आवेगी और सरल नीति को अपनाने की आवश्यकता न पड़े।

अब जब हमने शिथिलता और कड़ाई की नीतियों के बारे में चर्चा कर ली है, तो परिस्थिति-संबंधी विचारों को कार्य में लाने की तीसरी भ्रांतिपूर्ण परन्तु फिर भी लोकप्रिय नीति के रूप में मानवीय अधिकार की नीति की ओर अपना ध्यान लगाएं।

मानवीय अधिकार

एक बार फिर हम पहले इस नीति का वर्णन प्रदान करेंगे, फिर इसके परिणामों की ओर बढ़ेंगे और अंत में सुधारों को देखेंगे। आइए मानवीय अधिकार की नीति के वर्णन के साथ आरंभ करें।

वर्णन

जब व्याख्याकार मानवीय अधिकार के प्रति पहले से ही मन बना लेते हैं तो उनके अंदर दूसरे व्यक्तियों से अलग मत रखने की एक मजबूत प्रवृति होती है। यह मानवीय अधिकार एक प्रभावशाली कलीसिया अगुवा, एक शिक्षक, अभिभावक या फिर मित्र भी हो सकता है। या फिर यह बाइबल की नैतिक शिक्षाओं का पारंपरिक अथवा कलीसियाई दृष्टिकोणों का रूप भी ले सकता है।

अब यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि ये सब मानवीय अधिकारी व्याख्यात्मक प्रक्रिया में सकरात्मक भूमिका निभा सकते हैं। हमारे पास कलीसिया में धर्मविज्ञान की एक लम्बी और सम्मानजनक परंपरा है। और अनेक विद्वानों ने पवित्रशास्त्र की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों के विषय में बहुत

सी सहायक जानकारी को खोजा है। और यहां तक कि धर्मनिरपेक्ष समुदाय ने भी पवित्रशास्त्र की परिस्थितियों में महत्वपूर्ण विचारों को उत्पन्न किया है। अतः जब हम नैतिक शिक्षाओं के लिए पवित्रशास्त्र को ढूंढ़ते हैं तो इन मानवीय अधिकारों पर ध्यान देना सही है। फिर भी, ये मानवीय परंपराएं और समुदाय त्रुटिअधीन हैं इसलिए विश्वासियों को कभी बिना परखे इन अधिकारों के प्रति समर्पित नहीं होना चाहिए।

एक बार फिर घर और बाड़े के उदाहरण को याद कीजिए जहां जंगल उन बातों को दर्शाता है जिन्हें स्पष्टता से प्रतिबंधित किया गया है, घर उन बातों को दर्शाता है जिनकी स्पष्टता से अनुमति दी गई है, और घर के चारों की भूमि उन बातों को दर्शाती है जो पवित्रशास्त्र में कुछ अस्पष्ट हैं।

जैसा कि हमने देखा, शिथिलता की नीति जंगल के कोने पर बाड़ बांधेगी कि उन बातों की अनुमति दे सके जो अस्पष्ट प्रतीत होते हैं। और इसके विपरीत, कड़ाई की नीति घर के बिल्कुल करीब बाड़ा बांधेगी ताकि उन सब बातों पर प्रतिबंध लगाए जो अस्पष्ट हैं। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि जो मसीही मानवीय अधिकार की नीति का अनुसरण करते हैं वे अपने आप निश्चित नहीं करते कि बाड़ा कहां बांधना है। इसकी अपेक्षा, वे बाड़ा वहीं बांधते हैं जहां आधिकारिक लोग उन्हें बांधने के लिए कहते हैं।

निसंदेह, अनेक कारण हैं कि लोग मानवीय अधिकारों पर बहुत अधिक आश्रित होते हैं। कभी-कभी वे ऐसी कलीसियाओं के सदस्य होते हैं जिनके अगुवे दावा करते हैं कि केवल उन्हीं के पास पवित्रशास्त्र के गहन विचार हैं या उन्हीं के पास पवित्रशास्त्र की व्याख्या करने का अधिकार है। अन्य लोग यह मान लेते हैं कि उनका ज्ञान इतना अपर्याप्त है कि बाइबल के उनके अपने अध्ययन में उनके पास आत्मविश्वास का कोई आधार नहीं है। और कुछ लोग तो बस आलसी होते हैं। परन्तु हर परिस्थिति में जब कभी भी एक मसीही पवित्रशास्त्र को खोजने की अपनी जिम्मेदारी को त्याग देता है और दूसरे लोगों के निर्णयों के प्रति समर्पित रहता है तो वह व्यक्ति मानवीय अधिकार की नीति का अनुसरण कर रहा है।

मानवीय अधिकार के इस वर्णन को मन में रखते हुए, आइए उन परिणामों की ओर मुड़ें जो यह नीति विश्वासियों के जीवन में उत्पन्न कर सकती है।

परिणाम

हम पवित्रशास्त्र के परम अधिकार को ठुकराने के साथ आरंभ करके उन दो समस्याओं पर ही ध्यान देंगे जो तब उत्पन्न हो सकती हैं जब हम मानवीय अधिकार पर बहुत अधिक निर्भर हो जाते हैं। सारे व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए जब लोग पूरी तरह से मानवीय अधिकारों के निर्णयों के प्रति समर्पित हो जाते हैं तो वे अपने परम रूप से प्रकट मानक के रूप में बाइबल को ठुकरा देते हैं।

नए नियम से एक उदाहरण पर ध्यान दें। सुसमाचारों के अनुसार यीशु ने उन अनेक फरीसियों का सामना किया जिन्होंने पारंपरिक व्याख्याओं को अधिक महत्व देकर पवित्रशास्त्र के परम अधिकार को त्याग दिया था। मत्ती 15:4-6 में यीशु के शब्दों को सुनें:

> **क्योंकि परमेश्वर ने कहा था, कि अपने पिता और अपनी माता का आदर करना... पर तुम कहते हो, कि यदि कोई अपने पिता या माता से कहे, कि जो कुछ तुझे मुझ से लाभ पहुंच सकता था, वह परमेश्वर को भेंट चढ़ाई जा चुकी। तो वह अपने पिता का आदर न करे, सो तुम ने अपनी रीतियों के कारण परमेश्वर का वचन टाल दिया। (मत्ती 15:4-6)**

फरीसियों ने पवित्रशास्त्र को नहीं ठुकराया था। इसके विपरीत, उन्होंने तो पवित्रशास्त्र को बहुत अधिक महत्व दिया था। परन्तु तुलनात्मक रूप में उन्होंने पवित्रशास्त्र की पारंपरिक व्याख्या को और भी अधिक महत्व दिया था। उन्हें अपनी धारणाओं की तुलना पवित्रशास्त्र से करनी चाहिए थी और अपनी धारणाओं में कमी को पाना चाहिए था। परन्तु इसकी अपेक्षा फरीसियों ने उन व्याख्याओं को स्वीकार

किया जो पवित्रशास्त्र की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों के अनुरूप नहीं थीं। इसलिए यीशु ने उनकी निंदा की।

एक ऐसी समस्या जो पवित्रशास्त्र से अधिक मानवीय निर्णयों को महत्व देने से जुड़ी हुई हो, वह गलत व्याख्याओं को बढ़ावा देने वाली होती है। सारे मनुष्य गलतियां करते हैं। अतः जब हम बिना सोच-विचार किए दूसरों के निर्णयों से सहमत हो जाते हैं तो हम अवश्य कुछ गलतियां करते हैं। यह विशेषकर तब अधिक समस्या पैदा करने वाला हो जाता है जब कलीसिया स्वयं झूठी व्याख्याओं का साथ देती है। कभी-कभी ऐसी गलत व्याख्याओं को कलीसियाई अनुशासन के द्वारा थोपा भी जाता है।

उदाहरण के तौर पर, 325 ईस्वी में नीसीया की परिषद में कलीसिया ने आधिकारिक एवं सही रूप में एरियनवाद की उस झूठी शिक्षा का खंडन किया, जिसने त्रिएकता की धर्मशिक्षा का इनकार कर दिया था। फिर भी, 357 ईस्वी में सिरमियम की दूसरी परिषद में कलीसिया ने अपने दावे को बदल दिया और एरियनवाद की पुष्टि कर दी। और फिर कई स्थानीय परिषदों ने भी आने वाले वर्षों में इसी बात की पुष्टि कर दी। इस समय के दौरान सिकन्दरिया के बिशप अथनेशियस को एरियनवाद का विरोध करने के कारण बार-बार देशनिकाला दिया गया। उस समय उसे त्रिएकता की उन शिक्षाओं को मानने के कारण झूठा शिक्षक माना गया था जिन्हें हम अब प्रमाणित मानते हैं।

सारांश में, मानवीय अधिकार की नीति के विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं। अन्य बातों के साथ-साथ यह पवित्रशास्त्र के अद्वितीय अधिकार को ठुकरा सकती है और गलत शिक्षाओं के प्रति सहमति की ओर अगुवाई कर सकती है। इन रूपों में यह परमेश्वर के प्रकाशन के सत्य को धुंधला कर सकती है जिससे कि हमारा कर्त्तव्य हमसे छिप जाता है।

अब जब हमने मानवीय अधिकार की नीति के वर्णन और परिणामों को देख लिया है तो आइए एक सुधार के बारे में चर्चा करें जो हमें इस गलती को टालने में सहायता कर सकता है।

सुधार

सुधार काफी सरल है, और वह यह है कि हमें सदैव हमारे परम रूप से प्रकट मानक के रूप में पवित्रशास्त्र की सर्वोच्चता को हमेशा बनाए रखना आवश्यक है। कलीसिया और इसकी परंपराओं का अधिकार हमारे ऊपर उससे कम है और वे हमें पवित्रशास्त्र को समझने में वास्तव में सहायता कर सकते हैं। परन्तु वे पवित्रशास्त्र के समान हमारे विवेक को बांध नहीं सकते। जैसे यीशु ने फरीसियों के साथ अपने तर्कों को दर्शाया था, हमारी जिम्मेदारी पवित्रशास्त्र के शब्दों का उनके मूल अर्थ के अनुसार पालन करना है।

विश्वास के वेस्टमिनस्टर अंगीकरण का अध्याय 1 खण्ड 10 इस विचार का एक उपयोगी सारांश प्रस्तुत करता है। इसके शब्दों को सुनें:

> एक सर्वोच्च न्यायी जिसके द्वारा धर्म के सारे विवाद सुलझाए जाने हैं, एवं परिषदों के सारे निर्णयों, प्राचीन लेखकों के मतों, मनुष्यों की धर्मशिक्षाओं और निजी आत्माओं को परखा जाना है और जिसके न्याय में हमें शरण लेनी है, वह पवित्रशास्त्र में बात करने वाले पवित्र आत्मा के अतिरिक्त कोई और नहीं हो सकता।

पवित्रशास्त्र परमेश्वर का अपना वचन है। और कोई भी मानवीय परंपरा या व्याख्या परमेश्वर के परम अधिकार के साथ बात नहीं कर सकती। इसलिए हमें उसके प्रति समर्पित रहना चाहिए जो हम मानते हैं कि पवित्रशास्त्र अपनी वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों के जरिए प्रकट करता है।

व्यावहारिक रूप से बात करें तो इसका अर्थ है कि हमें हमारे हर निर्णय को पवित्रशास्त्र के समक्ष मापना चाहिए। त्रुटिअधीन मानवीय निर्णयों- यहां तक कि कलीसिया के निर्णयों- को ऐसे ही स्वीकार करने

के द्वारा संतुष्ट होने की अपेक्षा हमें यह देखने के लिए पवित्रशास्त्र को ढूंढ़ना चाहिए कि क्या जो बातें ये अधिकार कह रहे हैं, वे सत्य हैं या नहीं। यही वह बात थी जिसके लिए लूका ने प्रेरितों के काम 17:11 में बिरीया नगर के मसीहियों की प्रशंसा की थी:

> **ये लोग तो थिस्सलुनीके के यहूदियों से भले थे और उन्होंने बड़ी लालसा से वचन ग्रहण किया, और प्रतिदिन पवित्रशास्त्रों में ढूंढ़ते रहे कि ये बातें यो हीं हैं, कि नहीं। (प्रेरितों के काम 17:11)**

बिरीयावासियों के समान हमें सदैव पवित्रशास्त्र के स्तरों के द्वारा मानवीय गवाहियों और धर्मशिक्षाओं को जांचना चाहिए। कोई भी प्राणी, न ही प्रेरित पौलुस अपने आप में इतना आधिकारिक या सटीक है कि हम पवित्रशास्त्र से बढ़कर उसके शब्दों पर निर्भर रहें।

शिथिलता, कड़ाई और मानवीय अधिकार के प्रति झुकाव मुश्किल प्रश्नों के सरल परन्तु अविश्वासयोग्य उत्तर प्रदान करता है। पहली नजर में, सावधानी की ओर या स्वतंत्रता की ओर गलती करना बुद्धिमान प्रतीत होता है। परन्तु वास्तविकता में गलती किसी भी ओर हो, वह फिर भी गलती ही है।

देखें कि जब हम शिथिलता या कड़ाई या मानवीय अधिकार पर बहुत अधिक बल देते हैं तो हम पवित्रशास्त्र की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों को नजरअंदाज कर देते हैं। और फलस्वरूप हम वैसे अपने कर्त्तव्य को नहीं जान पाते जैसे हमें जानना चाहिए और इसलिए हम परमेश्वर के चरित्र के सदृश्य नहीं बन पाते। अतः हमें सदैव पवित्रशास्त्र के मूल अर्थ को खोजना चाहिए और इसके प्रति समर्पित रहना चाहिए।

प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी विषय-वस्तु, प्रकाशन की प्रकृति और एवं प्रकाशन के परिस्थिति-संबंधी पहलुओं की कुछ लोकप्रिय नीतियों को देखने के बाद अब हम उन विषयों पर ध्यान देने के लिए तैयार हैं जो वर्तमान संसार के प्रति प्रकाशन के प्रयोग में सामने आती हैं। वर्तमान संसार में पाई जाने वाली वास्तविकताएं किस प्रकार परमेश्वर के प्रति हमारी जिम्मेदारियों को जानने में हमारी सहायता करती हैं? और किस प्रकार हमारा कर्त्तव्य हमारी अपनी परिस्थितियों की वास्तविकताओं से प्रभावित होता है?

प्रकाशन का प्रयोग

आपको याद होगा कि बाइबल पर आधारित निर्णय लेने का हमारा नमूना यह है: नैतिक निर्णय लेने में एक व्यक्ति परिस्थिति पर परमेश्वर के वचन को लागू करता है। जैसा कि यह नमूना दर्शाता है, हम तीन दृष्टिकोणों से नैतिक निर्णयों को देखने के लिए तैयार हैं: परमेश्वर के वचन का निर्देशात्मक दृष्टिकोण, परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण एवं अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण। जैसे कि हम इस अध्याय में परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण पर ध्यान देते हैं, तो हमें सदैव स्वयं को याद दिलाना चाहिए कि परमेश्वर के वचन को सही प्रकार से लागू करने के लिए हमें परमेश्वर के वचन की विषय-वस्तु और उसकी प्रकृति से बढ़कर बातों को जानना जरूरी है। हमें हमारी वर्तमान परिस्थिति के बारे में भी कुछ जानना जरूरी है, वह परिस्थिति जिस पर हम परमेश्वर के वचन को लागू कर रहे हैं।

अब परमेश्वर का वचन इतना पर्याप्त है कि यदि हम इसे व्यापक रूप से जानें- यदि हम हर रूप में जानें कि किस प्रकार विशेष, सामान्य और अस्तित्व-संबंधी प्रकाशन उसके चरित्र को दर्शाता है- तो हम सदैव सटीक रूप से जान पाएंगे कि क्या करना है। आखिरकार, नैतिक शिक्षा का हर दृष्टिकोण दूसरे दृष्टिकोणों को शामिल करता है। अतः यदि हम निर्देशात्मक दृष्टिकोण के हर नैतिक आशय को देख सकते

हैं, तो हम परिस्थिति-संबंधी और अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोणों पर ध्यान देने के द्वारा किसी नए विचार को प्राप्त नहीं करेंगे।

परन्तु वास्तविकता में परमेश्वर के मानकों के बारे में हमारा ज्ञान व्यापक नहीं है। बल्कि परमेश्वर का वचन परमेश्वर के चरित्र के बारे में हमें सीमित जानकारी ही देता है। यह प्रकाशन हमारे सारे नैतिक प्रयासों के लिए पर्याप्त है, इसलिए नहीं कि यह हमें हर परिस्थिति में सटीक रूप में बताता है कि क्या करना है, बल्कि इसलिए कि यह हमें परमेश्वर के चरित्र के बारे में पर्याप्त जानकारी देता है ताकि हम समझ सकें कि हर परिस्थिति में क्या करना है। और क्या करना है इसे समझने का एक बहुत ही महत्वपूर्ण भाग उन परिस्थितियों को समझना है जिन पर हम परमेश्वर के वचन को लागू कर रहे हैं।

प्रकाशन के प्रयोग पर हमारी चर्चा तीन परिस्थिति-संबंधी विचारों पर ध्यान देगी: पहला, हम हमारी वर्तमान परिस्थितियों की वास्तविकताओं को समझने की आवश्यकता पर ध्यान देंगे। दूसरा, हम वर्तमान लक्ष्यों पर ध्यान देंगे। और तीसरा, हम उन वर्तमान माध्यमों पर ध्यान देंगे जिनके द्वारा परमेश्वर हमें इन वर्तमान लक्ष्यों को प्राप्त करने की अनुमति देता है। और इन सारे खण्डों में, हम भोजन के विषय में बाइबल पर आधारित नियमों पर विचार करने के द्वारा हमारी बातों को दर्शाएंगे। आइए, हमारी वर्तमान परिस्थितियों की वास्तविकताओं के साथ आरंभ करें।

वास्तविकताएं

इस खण्ड में जो महत्वपूर्ण बिंदू हम दर्शाना चाहते हैं वह यह है कि वास्तविकताओं में बदलाव परमेश्वर के वचन के प्रयोग में बदलाव की मांग करते हैं। और इस विचार को प्रमाणित करने के लिए हम देखेंगे कि किस प्रकार पवित्रशास्त्र स्वयं इस सिद्धांत का प्रयोग करता है। विशेष रूप में कहें तो, हम तीन भिन्न ऐतिहासिक समयों को देखेंगे: मूसा के अधीन निर्गमन का समय; वह समय जब इस्राएल राष्ट्र ने वाचा की भूमि पर अधिकार किया; और मसीह के स्वर्गारोहण के बाद नए नियम की कलीसिया का समय।

अब जब हम इन तीनों समयों की वास्तविकताओं पर ध्यान देते हैं तो उनके बीच एक संतुलन को बनाना महत्वपूर्ण है। उनके बीच ध्यान देने योग्य समानताएं और भिन्नताएं दोनों हैं। एक ओर तो परमेश्वर के चरित्र के बारे में तीनों समयों में काफी समानताएं हैं। परमेश्वर का चरित्र अपरिवर्तनीय है, यह बदल नहीं सकता। और इसलिए, इतिहास के इन प्रत्येक समयों में परमेश्वर के अस्तित्व की वास्तविकता और परमेश्वर के चरित्र के विशेष गुण अपरिवर्तनीय रहे। दूसरी बात यह कि इन सारे समयों में मानवजाति पतित और पापमय थी, और उन्हें परमेश्वर से नैतिक अगुवाई की बहुत जरूरत थी। और विशेष रूप से भोजन के बारे में कहें तो हम इस समानता को पाते हैं कि इन सारे समयों में भोजन परमेश्वर की महिमा के लिए खाया जाना था। और यह वास्तविक परिस्थिति आज हमारे समय में भी सार्थक बनी हुई है।

परन्तु वहीं दूसरी ओर, पवित्रशास्त्र इसे स्पष्ट करता है कि इन तीनों समयों के दौरान वास्तविकताओं के बीच भिन्नताएं भी थीं; इसलिए ऐसे कुछ कार्य जिन्हें कुछ समयों में पापमय माना जाता था, उन्हें दूसरे समयों में पापमय नहीं माना जाता।

आइए ध्यान दें कि किस प्रकार भोजन से संबंधित वास्तविकताएं पूरे इतिहास के दौरान बदलती गईं। निर्गमन के दिनों में इस्राएल के लोगों का संचालन तुलनात्मक रूप से कठोर नियमों के द्वारा किया गया, उन्हें एक खास तरीके से केवल शुद्ध जानवरों को ही खाने की अनुमति दी गई थी। एक उदाहरण के रूप में, लैव्यव्यवस्था 17:3-4 के अनुसार प्रतिज्ञा की भूमि की ओर यात्रा के दौरान इस्राएलियों को तब तक कुछ शुद्ध जानवरों को मारकर खाना पाप था जब तक उन्हें पहले तम्बू में यहोवा के सामने बलि के रूप में चढ़ाया न जाए।

परन्तु जब इस्राएली अच्छे से स्थापित हो गए और प्रतिज्ञा की भूमि पर फैल गए, तब पवित्रशास्त्र स्पष्ट करता है कि उनका संचालन तुलनात्मक रूप से सरल नियमों से किया गया। वास्तव में, स्वयं मूसा

ने इस बाद की परिस्थिति का अनुमान लगा लिया था। व्यवस्थाविवरण 12:15 के अनुसार जब इस्राएली प्रतिज्ञा की भूमि पर स्थापित हो गए तो उन्हें आराधना के स्थान पर यहोवा के समक्ष प्रस्तुत किए बिना उनके नगरों में किसी भी शुद्ध जानवर को मारकर खाने की अनुमति दे दी गई थी।

और यीशु की बलिदानी मृत्यु और स्वर्गारोहण के बाद कलीसिया का संचालन भोजन के विषय में अनुमतिदायक नियमों के साथ किया गया। जैसा कि हम प्रेरितों के काम 10:9-16 में पतरस के दर्शन के द्वारा सीखते हैं, परमेश्वर ने सारे जानवरों को शुद्ध घोषित किया ताकि गैरयहूदियों को कलीसिया में शामिल किए जाने में कोई रूकावट न हो।

और वास्तविकता यह है कि इन वास्तविक समानताओं और भिन्नताओं ने नैतिक निर्णयों को प्रभावित किया। जब तक वास्तविकताएं समान थीं, तब तक इन वास्तविकताओं पर आधारित निर्णय भी समान थे। उदाहरण के तौर पर, एक निर्णय जो समान बना रहा, वह था कि परमेश्वर भला है। और दूसरा निर्णय यह था कि मानवजाति पापी है, भोजन फिर भी परमेश्वर की महिमा के लिए ही खाया जाना था। ये और कई अन्य नैतिक निर्णय इन समयों के दौरान तुलनात्मक रूप से अपरिवर्तित रहे, क्योंकि जिन वास्तविकताओं पर वे आधारित थे, वे अपरिवर्तित रहे।

जहां हर समय में वास्तविकताएं भिन्न थीं, वहां नैतिक निर्णय भी भिन्न थे। निर्गमन के दौरान, कुछ जानवरों के विषय में निर्णय होना था कि "वही शुद्ध जानवर खाओ जो परमेश्वर के समक्ष चढ़ाए गए हों।" प्रतिज्ञा की भूमि में निर्णय होना था कि "केवल शुद्ध जानवर खाओ।" और नए नियम की कलीसिया के समय में यह होना था, "कोई भी जानवर खाओ।" हर समय में परमेश्वर का चरित्र समान रहा, परन्तु जो जिम्मेदारियां उसके चरित्र ने व्यवहार पर डालीं, वे बदलती परिस्थितियों के प्रकाश में बदल गईं।

अब जब हम इन समानताओं और भिन्नताओं को देखते हैं, तो हम देख सकते हैं कि वे वर्तमान मसीहियों के लिए दिशा-निर्देशक हैं। विशाल रूपों में, सारे युगों में ये वास्तविताएं सामान्य रूप में पाई जाती हैं। परमेश्वर का अस्तित्व और चरित्र नहीं बदला है और मानवजाति आज भी पतित और पापी है, और भोजन आज भी परमेश्वर की महिमा के लिए खाया जाना आवश्यक है। और फलस्वरूप, ऐसे निर्णय कि परमेश्वर भला है, मानवजाति पापी है, और भोजन के द्वारा परमेश्वर की महिमा करने की पुष्टि आज भी की जानी चाहिए।

परन्तु जो वास्तविक परिवर्तन हुए हैं उनके प्रकाश में हमें भोजन संबंधी पाप को कैसे परखना चाहिए? हमारी वास्तविकताओं और निर्गमन के समय एवं प्रतिज्ञा की भूमि के समय में इस्राएल के जीवन की वास्तविकताओं में बहुत भिन्नताएं हैं। निर्गमन के दौरान कठोर नियमों के पालन ने एक ऐसे निर्णय की ओर अगुवाई की कि वे परमेश्वर के समक्ष चढ़ाए गए शुद्ध जानवर ही खाएं। और प्रतिज्ञा की भूमि में सरल नियमों के पालन ने केवल शुद्ध जानवरों को ही खाने के निर्णय की ओर अगुवाई की। हमें मसीही होने के नाते आज इन नियमों से सीखना चाहिए, परन्तु वे आज हमारे समय में वैसे लागू नहीं होते, अतः उनके प्रयोग बदल गए हैं।

इस विषय पर हमारी परिस्थितियां आरंभिक कलीसिया की परिस्थितियों के समान हैं। अतः भोजन-संबंधी पाप को अनुमतिदायक नियमों के अनुसार ही लिया जाना चाहिए। प्रेरितों के काम 10:9-16 और अन्य अनुच्छेद जैसे 1 कुरिन्थियों 8-10 और रोमियों 14 हमें सिखाते हैं कि किसी भी जानवर को खाने का निर्णय कलीसिया के लिए भी निर्देशात्मक बना हुआ है। इस बात को दर्शाने के लिए आइए केवल एक अनुच्छेद को देखें जो इस शिक्षा को बहुत ही स्पष्ट करता है। 1 तीमुथियुस 4:2-5 में पौलुस के शब्दों को सुनें:

> झूठे मनुष्य... भोजन की कुछ वस्तुओं से परे रहने की आज्ञा देंगे; जिन्हें परमेश्वर ने इसलिये सृजा कि विश्वासी, और सत्य के पहिचाननेवाले उन्हें धन्यवाद के साथ खाएं। क्योंकि परमेश्वर की सृजी हुई हर एक वस्तु अच्छी हैः और कोई वस्तु

> **अस्वीकार करने के योग्य नहीं; पर यह कि धन्यवाद के साथ खाई जाए। क्योंकि परमेश्वर के वचन और प्रार्थना के द्वारा शुद्ध हो जाती है। (1 तीमुथियुस 4:2-5)**

किसी न किसी स्तर पर प्रत्येक नैतिक निर्णय हमसे मांग करता है कि हम वर्तमान वास्तविकताओं और बाइबलीय वास्तविकताओं के बीच समानताओं और भिन्नताओं को पहचान लें और उसी के अनुसार नैतिक निर्णय लें। फिर भी, भोजन के विषय पर नए नियम और वर्तमान संसार के बीच की परिस्थिति-संबंधी समानताएं दर्शाती हैं कि हमें सामान्यतः नए नियम की कलीसिया द्वारा स्थापित उदाहरण का अनुसरण करना चाहिए।

अब जैसा कि हमने देख लिया है कि बाइबल की वास्तविकताओं और हमारे जीवन की वास्तविकताओं के बीच समानताओं और भिन्नताओं पर ध्यान देना कितना महत्वपूर्ण है, तो हमें आज के मसीहियों के जीवनों में लक्ष्यों के प्रश्न की ओर मुड़ना चाहिए।

लक्ष्य

आइए एक बार पुनः निर्गमन, वाचा की भूमि में इस्राएल के जीवन और नए नियम की कलीसिया के समयों में पाए जाने वाले भोजन-संबंधी नियमों पर ध्यान दें।

मूसा के दिनों में भोजन-संबंधी नियमों के उद्देश्य परमेश्वर की पवित्रता का सम्मान करना और उसकी सेवा में लगे हुए लोगों के पवित्रीकरण का निश्चय करना था। लक्ष्य मानवीय पवित्रता था जो परमेश्वर की पवित्रता के समान हो। उदाहरण के तौर पर, लैव्यव्यवस्था 11:44-45 में यहोवा ने अपने लोगों को बताया:

> **रेंगनेवाले जन्तु के द्वारा जो पृथ्वी पर चलता है अपने आप को अशुद्ध न करना... पवित्र बनो, क्योंकि मैं पवित्र हूँ। (लैव्यव्यवस्था 11:44-45)**

और ऐसे सामान्य लक्ष्य निर्गमन, वाचा की भूमि में इस्राएल के जीवन और कलीसिया के समयों में पाए जाते रहे, चाहे इन बाद के समयों में भोजन-संबंधी नियम बदल गए। उदाहरण के तौर पर यशायाह 62:12 में भविष्यवक्ता ने वाचा की भूमि में लोगों को उत्साहित किया कि वे पवित्रता के लिए प्रयास करते रहें ताकि वे इस तरह से संबोधित किए जाएं:

> **पवित्र प्रजा और यहोवा के छुड़ाए हुए (यशायाह 62:12)**

और 1 पतरस 1:15-16 में प्रेरित ने कलीसिया को ये शब्द लिखे:

> **पर जैसा तुम्हारा बुलानेवाला पवित्र है, वैसे ही तुम भी अपने सारे चाल चलन में पवित्र बनो। क्योंकि लिखा है, कि पवित्र बनो, क्योंकि मैं पवित्र हूँ। (1 पतरस 1:15-16)**

वास्तव में जब पतरस ने लोगों को पवित्र बनने का निर्देश दिया तो उसने उस भोजन-संबंधी नियम से उद्धृत किया था जो लैव्यव्यवस्था 11:44-45 में हमने अभी पढ़ा है।

परन्तु इन समानताओं के बावजूद भी पवित्रता के प्रति हर समय के कुछ विशेष लक्ष्य थे जो दूसरे समय के लक्ष्यों से भिन्न थे। निर्गमन के दौरान एक लक्ष्य था, यहूदियों को गैरयहूदियों से अलग करना। और उसी लक्ष्य को तब भी बनाए रखा गया जब इस्राएल वाचा की भूमि में था।

परन्तु नए नियम की कलीसिया में परिस्थितियां तब बदल गईं जब परमेश्वर अनेक गैरयहूदियों को विश्वास में ले आया। ऐसे समय में लक्ष्य यहूदियों को गैरयहूदियों से अलग करना नहीं था बल्कि कलीसिया में यहूदियों को गैरयहूदियों के साथ जोड़ना था।

और अवश्य ही, इन समयों के दौरान परमेश्वर की महिमा एवं हमारी पवित्रता के लक्ष्यों के बीच सामंजस्य का परिणाम इन तीनों समयों में नैतिक निर्णयों के बीच सामंजस्य के रूप में निकला। एकसमान निर्णयों के विषय में कहें तो परमेश्वर की पवित्रता को दर्शानेवाली मानवीय पवित्रता के लक्ष्य की पुष्टि इन सारे समयों में की गई। और फलस्वरूप, इन नैतिक निर्णयों की भी पुष्टि की गई कि परमेश्वर पवित्र है और मनुष्यजाति को भी पवित्र होने के लिए प्रयास करना चाहिए।

इसके साथ-साथ हर समय में ऐसे नैतिक निर्णय भी थे जो दूसरे समयों के निर्णयों से भिन्न थे। निर्गमन के समय में यहूदियों को गैरयहूदियों से अलग करने के लक्ष्य ने गैरयहूदियों के भोजन को खाने के निमंत्रणों को ठुकरा देने के निर्णय की ओर प्रेरित किया। और यही निर्णय शायद प्रतिज्ञा की भूमि में इस्राएल के समय के दौरान भी बना रहा। परन्तु नए नियम की कलीसिया का उचित निर्णय गैरयहूदियों के भोजन के निमंत्रणों को स्वीकार करना था। आखिरकार, और यह वही था जो परमेश्वर ने पतरस को प्रेरितों के काम अध्याय 10 में विशेष रूप से करने के लिए कहा था। हर समय के दौरान परमेश्वर का चरित्र समान बना रहा। परन्तु उसके चरित्र के द्वारा लागू किए गए लक्ष्य कुछ अलग थे।

अब, जब हम इन समानताओं और भिन्नताओं को देखते हैं तो हम देख सकते हैं कि वे वर्तमान मसीहियों के लिए दिशा-निर्देशक हैं। समानता के बारे में कहें तो हमें आज भी परमेश्वर की महिमा और हमारी पवित्रता के लक्ष्यों की पुष्टि करनी चाहिए। और इसे आज भी हमें ऐसे निर्णयों की ओर प्रेरित करना चाहिए कि परमेश्वर पवित्र है और मनुष्यजाति को पवित्र बनने के लिए प्रयास करना चाहिए। इन रूपों में, वर्तमान संसार के लक्ष्य और निर्णय प्रचीन संसार के लक्ष्यों और निर्णयों को दर्शाते हैं।

परन्तु हमें एक ओर वर्तमान लक्ष्यों और निर्णयों एंव दूसरी ओर पवित्रशास्त्र के लक्ष्यों और निर्णयों के बीच भिन्नता पर भी ध्यान देना चाहिए। निर्गमन के दौरान लक्ष्य यहूदियों को गैरयहूदियों से अलग करना था, और इसने गैरयहूदी भोजन करने के निमंत्रणों को ठुकराने के निर्णय की ओर प्रेरित किया। और प्रतिज्ञा की भूमि में इस्राएल के समय में वही लक्ष्य और निर्णय लागू हुआ। परन्तु नए नियम की कलीसिया के समय में लक्ष्य यहूदियों और गैरयहूदियों को जोड़ना था, जिसने गैरयहूदी भोजन करने के निमंत्रणों को स्वीकार करने के निर्णय की ओर प्रेरित किया।

आज की कलीसिया भी यहूदी और गैरयहूदी विश्वासियों से मिली हुई होनी है, इसलिए हमारी परिस्थिति के लक्ष्य उनसे भिन्न हैं, जो निर्गमन और वाचा की भूमि के समयों में थे। फलस्वरूप, हमें वैसे निर्णय नहीं लेने चाहिए जो उन्होंने लिए। परन्तु हमारे लक्ष्य नए नियम की कलीसिया के लक्ष्यों के समान हैं। और फलस्वरूप, हमारे निर्णय भी उनके निर्णयों के समान होने चाहिए ताकि हम भी गैरयहूदी भोजन करने के निमंत्रणों को स्वीकार करें।

प्रत्येक नैतिक निर्णय हमसे बाइबलीय लक्ष्यों के प्रकाश में वर्तममान लक्ष्यों पर विचार करने और उनके बीच की समानताओं और भिन्नताओं पर ध्यान देने की मांग करता है। जहां कहीं भी महत्वपूर्ण भिन्नताएं पाई जाती हैं, वहां हमें समान निर्णय लेने से रूकना चाहिए। परन्तु जहां महत्वपूर्ण समानता पाई जाती है, वहां हमें नैतिक निर्णयों को स्वीकार करना चाहिए।

कुछ विषयों में, जैसे कि भोजन का विषय, हमारे निर्णय पुराने नियम में लिए गए निर्णयों से भिन्न होंगे, परन्तु नए नियम की कलीसिया के द्वारा लिए गए निर्णयों के काफी समान होंगे। परन्तु दूसरे नैतिक विषयों में हम यह भी देख सकते हैं कि नए नियम की कलीसिया के द्वारा लिए गए निर्णय भी हमारे वर्तमान संदर्भ के अनुचित हैं।

वास्तविकताओं और लक्ष्यों के विषय में सामंजस्य के महत्व को देखने के बाद अब हमें हमारे अंतिम विषय की ओर मुड़ना चाहिए: पवित्रशास्त्र में प्रमाणित माध्यमों एवं वर्तमान संसार में हमारे समक्ष उपलब्ध माध्यमों के बीच सामंजस्यता।

माध्यम

माध्यमों की समानताओं और भिन्नताओं पर ध्यान देने के महत्व को दर्शाने के लिए आइए एक अंतिम बार निर्गमन, वाचा की भूमि में इस्राएल के जीवन और नए नियम की कलीसिया के समयों में भोजन-संबंधी नियमों की ओर मुड़ें।

एक ओर तो निर्गमन, वाचा की भूमि में जीवन और नए नियम की कलीसिया के समयों में माध्यमों के बीच की समानता काफी आधारभूत है। सरल रूप में कहें तो, इन तीनों समयों के दौरान लोगों को पवित्रता को प्राप्त करने के लिए भोजन-संबंधी बातों का प्रयोग करना था।

परन्तु भिन्नताएं अधिक व्यापक हैं। उदाहरण के तौर पर, निर्गमन के दौरान भोजन के माध्यम से पवित्रता को पाने के प्रयास में खाने से पहले जानवरों को तम्बू में बलिदान के रूप में चढ़ाया जाना जरूरी था। नियम का यह माध्यम उस समय के दौरान अच्छे तरीके से काम किया जब इस्राएली मरूभूमि में विचरण कर रहे थे। उन दिनों के दौरान सारा राष्ट्र तम्बू के आसपास ही रहा करता था। निर्गमन 16:35 दर्शाता है कि उनके भोजन में प्रमुख रूप से मन्ना हुआ करता था, न कि घरेलू जानवरों का मांस।

परन्तु वाचा की भूमि में अनेक लोग तम्बू से काफी दूर रहा करते थे, और उस मन्दिर से भी दूर जो बाद में सुलेमान ने यरूशलेम में बनवाया था। इससे बढ़कर, परमेश्वर ने मन्ना प्रदान करना भी बंद कर दिया था और लोग घरेलू जानवरों का मांस अधिक खा रहे थे। इसलिए व्यवस्थाविवरण 12:15 में परमेश्वर ने अपने लोगों के जीवनों की नई परिस्थितियों में उपयुक्त बैठने के लिए उसकी आवश्यकताओं को ग्रहण कर लिया। विशेष रूप से उसने लोगों को उनके अपने नगरों में जानवरों को काटने की अनुमति दे दी। पवित्रता की आवश्यकता उसकी अभी भी थी, परन्तु उसने इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए लोगों को एक नया माध्यम दे दिया।

जैसा कि हम देख चुके हैं, नए नियम की कलीसिया के दौरान आवश्यकताएं फिर से बदल गईं। जैसे-जैसे परमेश्वर का राज्य इस्राएल से बाहर के अन्य देशों, लोगों और संस्कृतियों में फैलता गया तो गैरयहूदी बड़ी संख्या में कलीसिया में आने लगे। फलस्वरूप, पवित्रता ने अब यह आवश्यकता लोगों के सामने नहीं रखी कि यहूदी लोग गैरयहूदी लोगों से अलग रहें। बल्कि जैसे पतरस ने प्रेरितों के काम 10:9-16 में सीखा, पवित्रता ने उनके समक्ष भोजन-संबंधी विषयों में जुड़े रहने की आवश्यकता रखी ताकि सभी मसीही एक-दूसरे के साथ संगति कर सकें। परमेश्वर ने भोजन-संबंधी बातों में परिवर्तन का प्रयोग कलीसिया में यहूदियों और गैरयहूदियों में एकता लाने के लिए किया।

और जैसा कि हमने वास्तविकताओं और लक्ष्यों के बारे में देखा था, इन समयों के दौरान माध्यमों के बीच समंजस्य नैतिक निर्णयों में प्रकट हुआ। जब तक माध्यम समान थे, तो एक वैध निर्णय यह हो सकता था कि भोजन का प्रयोग इन रूपों में किया जाए जो परमेश्वर की पवित्रता का सम्मान करें और उसकी सेवा में उसके लोगों को पवित्र करें।

परन्तु जब माध्यम ही अलग-अलग थे, तो भोजन के अन्य पहलुओं के विषय में भिन्न निर्णय लिए जाने चाहिए थे। निर्गमन के दौरान माध्यम तम्बू में जानवरों को बलिदान करना था। और इस बात ने खाने से पहले जानवरों को तम्बू में बलिदान किए जाने के निर्णय की ओर प्रेरित किया होगा। वाचा की भूमि में माध्यम नगरों में जानवरों को काटना था, और इस बात ने शुद्ध जानवरों को ही काटने के निर्णय की ओर प्रेरित किया होगा। और नए नियम की कलीसिया में भोजन-संबंधी आजादी के माध्यम ने इस कथन को प्रेरित किया होगा कि एक सही नैतिक निर्णय के रूप में "वही खाओ जो गैरयहूदी खाते हैं।"

और वर्तमान मसीहियों के पास इन समानताओं और भिन्नताओं से सीखने के लिए बहुत कुछ है। निर्गमन, वाचा की भूमि में इस्राएल के जीवन और नए नियम की कलीसिया के समयों के साथ वर्तमान संसार की समानता के कारण हमें पवित्रता को प्राप्त करने के लिए भोजन-संबंधी बातों का प्रयोग करने में उनके समान दृढ़-निश्चय दिखाना चाहिए। और यह माध्यम हमें इस नैतिक निर्णय की पुष्टि करने में प्रेरित

करना चाहिए कि भोजन को ऐसे रूपों में इस्तेमाल करना चाहिए जो वर्तमान समय में भी परमेश्वर की पवित्रता का सम्मान करें और उसके लोगों में पवित्रता को बढ़ाएं।

इतिहास के इन समयों के दौरान इस्तेमाल किए गए माध्यमों के बीच पाई जाने वाली भिन्नता से भी हम सीख सकते हैं। हम निर्गमन के दौरान रह रहे परमेश्वर के उन लोगों के समान तम्बू के पास नहीं रहते जब माध्यम तम्बू में जानवरों को बलिदान चढ़ाने का था और निर्णय यह था कि जानवरों को तम्बू में बलिदान किया जाए। और हम पूरे यहूदी राष्ट्र में भी नहीं रहते जो गैरयहूदियों से अलग होकर रहें, जैसा कि वाचा की भूमि में होता था जब माध्यम नगरों में जानवरों को काटना था, और निर्णय था कि खाने के लिए केवल शुद्ध जानवरों को ही काटना। अतः, हमें उस माध्यम का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए जो परमेश्वर के लोगों ने उन समयों के दौरान किया और न ही उन माध्यमों के आधार पर निर्णय लेने चाहिए।

परन्तु नए नियम की कलीसिया पर ध्यान दें। उन्होंने भोजन की आजादी के माध्यम का प्रयोग किया और कलीसिया के भीतर एकता लाने के लिए वही खाने का निर्णय किया जो गैरयहूदी खाते हैं। और क्योंकि हमारी परिस्थिति उनकी परिस्थिति के समान है, इसलिए हमें वैसे ही माध्यमों का प्रयोग करना चाहिए और वैसे ही निर्णय लेने चाहिए।

जैसे कि वास्तविकताओं और लक्ष्यों के साथ हुआ, ऐसे कुछ विषय होंगे जिनमें नए नियम की कलीसिया की परिस्थिति हमारी अपनी परिस्थिति से भिन्न हो, इसलिए हम सदैव वैसे माध्यमों का प्रयोग नहीं कर सकते और न ही वैसे निर्णय ले सकते हैं जो नए नियम की कलीसिया ने लिए थे।

हमारे समक्ष प्रकट हर नियम को कर्मठता और बुद्धि के साथ लागू किया जाना चाहिए, न कि पवित्रशास्त्र में पाए जाने वाले व्यवहार की सिर्फ नकल करके। और हम बाइबल में दर्शायी गई परिस्थितियों एवं हमारे अपने जीवन की परिस्थितियों के बीच सामंजस्य को देखने के द्वारा निश्चय कर सकते हैं कि वर्तमान संसार में प्रयोग करने के लिए कौनसे माध्यम उचित हैं।

निष्कर्ष

इस अध्याय में हमने चार विषयों का आकलन किया है जो प्रकाशन और परिस्थिति के बीच संबंध को समझने में सहायता करते हैं, जब हम परमेश्वर के समक्ष अपने कर्त्तव्य को जानने का प्रयास करते हैं। हमने परिस्थितियों के अनुसार प्रकाशन की विषय-वस्तु, प्रकाशन की परिस्थिति-संबंधी प्रकृति, प्रकाशन के प्रति लोकप्रिय व्याख्यात्मक नीतियों, और हमारे वर्तमान संसार के प्रति प्रकाशन के प्रयोग को जांचा है। और हमने देखा है कि बाइबल पर आधारित निर्णय लेने के लिए हमें उन तरीकों पर ध्यान देना जरूरी है जिनमें परिस्थिति-संबंधी ये सारे कारण हमारे कर्त्तव्य के प्रति हमारे ज्ञान में योगदान दें।

ऐसे विश्वासियों के रूप में जो नैतिक निर्णय लेना चाहते हैं, हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है कि हम अपनी नैतिक परिस्थिति को समझ लें। और जैसा कि हम देख चुके हैं, वास्तविकताओं, लक्ष्यों और माध्यमों के रूप में हमारी परिस्थिति के बारे में सोचना सहायक होता है। इन विषयों की ओर ध्यान देने के द्वारा हम परमेश्वर के प्रकाशन को बेहतर रूप से समझ सकते हैं। और जब हम ऐसा करते हैं तो हम नैतिक निर्णय लेने के बाइबलीय नमूने के समान व्यवहार करने के लिए बेहतर रूप से तैयार हो जाएंगे।